नाभिकीय युद्ध:

एशिया के लिए परिणाम

अलेक्सेई ख़बारोव
अलेग्जान्दर स्नेगिन

एशिया के लिए परिणाम

लेखक

अलेक्सेई ख़बारोव ▫ अलेग्ज़ान्दर स्नेगिन

नवयुग प्रेस, दिल्ली

प्रकाशक
नवयुग प्रेस,
प्लेज़र गार्डन, चाँदनी चौक,
दिल्ली

संस्करण : 1986

मूल्य
चार रुपये

मुद्रक

भारती प्रिन्टर्स
, दिल्ली-32

विषय-सूची

पश्चिम के कुछ सर्वाधिक आक्रामक क्षेत्रों द्वारा नवें दशक में अपनायी गयी नीति के परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में उल्लेखनीय गिरावट आयी। इसका परिणाम यह हुआ कि नाभिकीय युद्ध के भड़क उठने का खतरा बहुत अधिक बढ़ गया जिसमें कि हज़ारों नाभिकीय हथियारों का उपयोग हो सकता था।

सोवियत संघ और अमरीका के बीच बातचीत और समझौतों के युग, जबकि दोनों देशों के बीच नाभिकीय हथियारों के परिसीमन के बारे में अनेक महत्वपूर्ण समझौते हुए, के बाद स्थिति गंभीर रूप से बिगड़ चुकी है।

अमरीका ने सोवियत संघ के साथ 1979 में हुई सामरिक आक्रामक हथियारों के परिसीमन संबंधी संधि (साल्ट-2) को मंजूरी नहीं दी। यह संधि नाभिकीय हथियारों के निर्माण पर संख्या और गुणवत्ता दोनों ही दृष्टि से रोक लगाती है। अमरीका ने सोवियत संघ के साथ सैनिक-राजनीतिक प्रश्नों पर होने वाली बहुत-सी द्विपक्षीय वार्ताओं में बाधा डाली। वाशिंगटन ने सोवियत संघ द्वारा स्थापित आदर्श को मानने से इंकार कर दिया। अमरीका यह भी जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं था कि वह पहले नाभिकीय हथियारों का उपयोग नहीं करेगा।

अमरीका ने सैनिक प्रमुखता हासिल करने का प्रयास करने के लिए हथियारों की जोरदार होड़ शुरू कर रखी है। नाभिकीय हथियारों के "आधुनिकीकरण" की अनेक योजानाओं को लागू किया जा रहा है। इन कार्यक्रमों में एमआईआरवी प्रक्षेपास्त्रों का आधुनिकीकरण का कार्यक्रम भी शामिल है। ये प्रक्षेपास्त्र अभी भी एक साथ बहुत से निशानों पर अत्यधिक सही निशाना साधने में सक्षम हैं। अमरीकी ज़खीरे में भूमि, वायु और समुद्र में तैनात क्रूज़ प्रक्षेपास्त्र पहले ही शामिल किये जा चुके हैं। न्यूट्रान हथियारों का निर्माण जारी है। नाभिकीय और रासायनिक हथियारों की नयी पीढ़ी तैयार करने पर भी काम चल रहा है। इन सब तथ्यों ने मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय स्थिरता को गंभीर नुक़सान पहुँचाया है। सोवियत संघ को मजबूरन सामरिक-समता बनाये रखने के लिए उचित क़दम उठाने पड़े हैं।

दस-पन्द्रह वर्ष पहले नाभिकीय युद्ध का मतलब लाखों-करोड़ों लोगों की मौत था लेकिन आज जिस प्रकार से नाभिकीय हथियारों का ज़खीरा बढ़ चुका है यह

स्पष्ट है कि नाभिकीय युद्ध का परिणाम सम्पूर्ण मानवता का विनाश हो सकता है।

1980 में राष्ट्रपति कार्टर ने वाइट हाउस के 59वें निर्देश पर हस्ताक्षर किये। यह निर्देश सीमित नाभिकीय युद्ध के सिद्धान्त को क़ानूनी रूप देता है। यहाँ यह भी बताया जा सकता है कि अमरीकी सैनिक-राजनीतिक सिद्धान्तों में दोनों ही क्षेत्रों में—जहाँ नाटो और वारसा-संधि के देशों के बीच आमने-सामने टकराव है अथवा बाहर के क्षेत्र—सीमित या नियंत्रित नाभिकीय युद्ध छेड़ने की इजाज़त है। इसके अलावा अमरीकी सैनिक-राजनीतिक विचारधारा में विकासशील विश्व में कभी भी उत्पन्न होने वाली क्षेत्रीय या स्थानीय संकट की स्थिति में नाभिकीय हथियारों के उपयोग की संभावनाओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता रहा है।

सोवियत नेतृत्व ने बारंबार यह स्पष्ट किया है कि नाभिकीय युद्ध में कोई भी विजयी नहीं हो सकता है। यदि यह 'छोटे' स्तर पर भी भड़क उठा तो निश्चय ही यह बड़े पैमाने पर नाभिकीय हमलों का मार्ग प्रशस्त करेगा। सोवियत नेताओं ने अमरीकी राजनीतिक और सैनिक सिद्धान्तविदों की इन अनुचित मान्यताओं की भी निंदा की है कि नाभिकीय संघर्ष को कुछ चुनिंदा और सीमित हमलों तक ही रोका जा सकता है अथवा कि 'सीमित' नाभिकीय युद्ध कुछ भौगोलिक सीमाओं के अन्दर ही लड़ा जा सकता है।

अमरीकी विदेश नीति में 'एशियाई छोर' को लगातार और मज़बूत बनाते रहने को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता रहा है लेकिन रीगन प्रशासन में इसे और भी अधिक बढ़ावा मिला है। अमरीका इस क्षेत्र में अपनी सैनिक उपस्थिति तो बढ़ा ही रहा है इसके अलावा वह उन देशों को अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाने तथा सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों के साथ सीधे सैनिक टकराव की नीति अपनाने के लिए हरसंभव प्रयास कर रहा है, जिनके साथ उसकी संधियाँ और ज़िम्मेदारियाँ हैं।

एशिया में अमरीका के सैनिक अड्डे क्षेत्र के देशों के अस्तित्व के लिए ख़तरा

आठवें दशक के उत्तरार्ध से ही अमरीका दुनिया में सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सभी क्षेत्रों में अपने सैनिक अड्डे और चौकियों का निर्माण करता आ रहा है।

रीगन प्रशासन ने सैनिक अड्डों के निर्माण के लिए बजट प्रावधान में अधिक

धन देकर इन प्रयासों की गति और तेज़ कर दी है। वाशिंगटन ने अगले पाँच वर्षों में विदेशों में अपने अड्डों को मज़बूत करने और विकास करने पर तीन हज़ार करोड़ डालर ख़र्च करने की योजना बनाई है। इनमें से दो अरब डालर हिंद-महासागर और दक्षिण-पश्चिम एशिया में वाह्य चौकियों की एक शृंखला बनाने के लिए हैं।

आज अमरीका के 32 देशों में 1500 से अधिक सैनिक अड्डे और अन्य प्रतिष्ठान हैं। इनमें पाँच लाख से भी अधिक सैनिक कर्मचारी स्थायी रूप से तैनात हैं। केवल 1982 में ही इनकी संख्या में करीव 6 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई थी।

अमरीका ने प्रशांत और हिंद महासागर में भारी मात्रा में अपनी नौसैनिक शक्ति जमा कर रखी है। इसमें 160 जंगी जहाज, जिनमें छह आक्रामक विमान वाहक पोतों के अलावा कई दर्जन नाभिकीय शक्ति से संचालित पनडुबियाँ और करीव एक हज़ार लड़ाकू विमान शामिल हैं।

इसके अलावा अमरीकी सीमाओं के परे युद्ध छेड़ने के लिए बनाई गई तत्काल तैनाती बल को भी शामिल किया जाना चाहिए। इस सेना में करीब तीन लाख कर्मचारी हैं जो परम्परागत और नाभिकीय दोनों प्रकार का युद्ध करने में प्रशिक्षित हैं। इस बल में विमानवाहक पोतों पर तैनात परमाणु हथियार ले जाने वाले बी-52 क़िस्म के लड़ाकू विमानवर्षक और नाभिकीय हथियार छोड़ने में सक्षम अन्य विमान भी हैं। तोपखाने द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली 105 मि०मी० की तोपों के स्थान पर 155 मिली मीटर की तोपें तैनात की जा रही हैं जो नाभिकीय प्रक्षेपास्त्रों को भी फेंक सकती हैं। मैरीन कोर को हाविज़र किस्म के हथियार दिये गए हैं जो न्यूट्रान गोले भी फेंक सकते हैं।

तत्काल तैनाती बल को जनवरी 1983 में नवगठित सेंट्रल कमांड (सेंटकाम) का एक अंग बनाया गया था। सेंटकाम का कार्यक्षेत्र दक्षिण-पश्चिम एशिया, उत्तर-पूर्व अफ्रीका और हिंद महासागर के उत्तरी पूर्वी क्षेत्र में स्थित 19 देशों में फैला हुआ है। अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून के मूल नियमों का भी खुल्लमखुल्ला उल्लंघन करके इस पूरे क्षेत्र को अमरीका ने अपना 'प्रमुख हितों वाला' हिस्सा घोषित कर रखा है। तत्काल तैनाती बल की संख्या और उसका साज-सामान, जिसमें अभी 200 विमान और 20 से 30 के क़रीव जंगी जहाज़ शामिल हैं, की भविष्य में विशेष बढ़ोत्तरी की जाएगी।

अमरीकी सैनिक नीति का मुख्य आधार 'सर्वोच्च सुरक्षा' प्राप्त करना है। यह सिद्धान्त अमरीका द्वारा किसी भी जवाबी हमले को अपनी सीमाओं से हटाकर दुनिया के अन्य हिस्सों पर केन्द्रित करने की अजीबोगरीब इच्छा में परिलक्षित होता है। अमरीका अपने सैनिक अड्डों और प्रतिष्ठानों, जिनमें वह संघर्षों के दौरान इस्तेमाल किया जाने वाला साज़-सामान और गोला-बारूद रखता है को,

अमरीकी सीमाओं से यथासंभव दूर और सोवियत संघ तथा अन्य समाजवादी देशों की सीमाओं के नज़दीक-से-नज़दीक रखना चाहता है। इन दिनों अमरीका में इस बात पर गहराई से विचार किया जा रहा है कि अमरीकी प्रक्षेपास्त्रों की तैनाती की समस्या को पूरी दुनिया के स्तर पर हल किया जाना चाहिए। इस चर्चा में एशिया और समुद्र को भी उन क्षेत्रों के रूप में शामिल किया जा रहा है जहाँ कि प्रक्षेपास्त्र तैनात किये जा सकते हैं। पेंटागन के नीति-निर्धारकों की राय में पूर्वी एशिया और प्रशांत तथा हिंद महासागर क्षेत्र को भी पश्चिमी यूरोप और अटलांटिक महासागर की तरह ही नाभिकीय प्रणालियों के अग्रिम अड्डों की तैनाती वाले क्षेत्र बना लिया जाना चाहिए।

प्रशांत और हिंद महासागर क्षेत्र में अमरीकी सेनाओं के प्रमुख विलियम जे० क्रो का कहना है कि ये क्षेत्र 'अमरीकी सुरक्षा क्षेत्र' के 'संभावित' क्षेत्र हैं। अगले कुछ वर्षों में इस क्षेत्र में अमरीकी सैनिक उपस्थिति, जिसमें नाभिकीय प्रक्षेपास्त्र भी शामिल है, बढ़नी ही है। 'प्रशांत समुदाय' के गठन के साथ-साथ अमरीकी-जापानी-दक्षिण कोरियाई त्रिपक्षीय आक्रामक सहयोग स्थापित करने पर भी अमरीका काम कर रहा है।

पिछले दो-तीन वर्षों में एशिया और प्रशांत क्षेत्र में तैनात अमरीकी सैनिकों की संख्या में क़रीब तीस हज़ार की वढ़ोतरी हुई है। अब यह कुल संख्या बढ़कर डेढ़ लाख तक पहुँच चुकी है। इस क्षेत्र में तैनात सातवें बेड़े की शक्ति लगातार बढ़ाई जा रही है। इस बेड़े में हाल ही में शामिल किये गये पोतों में अति-आधुनिक विमानवाहक कार्ल विनसन लेवनानी क्षेत्र पर हमले के लिए 'ख्याति' प्राप्त जंगी जहाज न्यू जर्सी, और ट्राइडेंट नाभिकीय प्रक्षेपास्त्रों से लैस ओहयो क़िस्म की नाभिकीय इंधन से चलने वाली आधुनिक पनडुब्बियाँ शामिल हैं। सातवें बेड़े के जहाज़ों में क़रीब 500 टामहाक क्रूज प्रक्षेपास्त्र तैनात करने की योजना है, जिसमें से एक-तिहाई में नाभिकीय हथियार लगे होंगे।

अमरीका द्वारा सार्वजनिक रूप से की गई घोषणाओं में सोवियत सीमाओं के बहुत निकट सुदूर-पूर्व में अमरीकी सैनिक शक्ति की तैनाती का उल्लेख है, जिनमें मध्यम-दूरी तक मार करने वाली नाभिकीय प्रणालियाँ भी शामिल हैं। इसका उद्देश्य उड़ान का समय कम करना और अचानक हमले की सफलता को बढ़ाना है। इस आशय की भी खबरें मिली हैं कि अमरीका अलास्का और सुदूर-पूर्व क्षेत्रों में क्रमशः मध्यमदूरी तक मार करने वाली पर्शिंग-2 और भूमि पर तैनात की जाने वाले क्रूज़ प्रक्षेपास्त्र तैनात करने वाला है।

हिंद महासागर के तट पर बसे अनेक विकासशील देशों के पड़ोसी क्षेत्रों को 'अपने प्रमुख हितों वाला क्षेत्र' घोषित करके अमरीका ने यहाँ छठवें और सातवें बेड़े के दो विमानवाहक जहाजों को स्थायी रूप से तैनात कर दिया है। दिएगो-

गार्सिया द्वीप एक बड़ा सैनिक अड्डा है, जहाँ नाभिकीय हथियार पहले ही तैनात किये जा चुके हैं। इस द्वीप की हवाई पट्टी को बड़ा किया जा रहा है और शीघ्र ही यहाँ नाभिकीय हथियारों से लैस लड़ाकू विमान वी-52 और अन्य विशालकाय मालवाही विमान उतरने लगेंगे। इस द्वीप को इस क्षेत्र में तत्काल तैनाती बल की एक वाह्य चौकी के रूप में विकसित कर दिया गया है। मैरीन कोर विग्रेड द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले सैनिक साज-सामान और गोलाबारूद से लदे अनेक अमरीकी जहाज़ हमेशा इसके बंदरगाह पर लगा डाले रहते हैं। यह भी बताया गया है कि अमरीका इस द्वीप पर नाभिकीय हथियारों का एक विशाल भंडार तैयार कर रहा है।

वाशिंगटन ने पश्चिमी एशिया के देशों पर भी अपनी नज़र डाली है। उसने खास करके पाकिस्तान को 1981 में 320 करोड़ डालर के बराबर ऋण दिया था जिसका ज़्यादातर हिस्सा अपनी सैनिक शक्ति को और भी मज़बूत बनाना था। इसके बदले में अमरीका को पश्चिमी एशिया में अपने पाँव जमाने के लिए एक देश को आधार के रूप में इस्तेमाल करने की इजाज़त मिली। अमरीका का अब इस देश में अपनी तत्काल तैनाती बल की एक टुकड़ी तैनात करने का इरादा है। कराची, ग्वादर और पेशावर में वायु और नौसैनिक अड्डों का निर्माण चल रहा है। वाशिंगटन बंगलादेश से सेंट मार्टिन द्वीप पट्टे पर लेने की फिराक़ में है जिससे वहाँ एक नया नौसैनिक अड्डा बनाया जा सके। श्रीलंका ने हिंद-महासागर में तैनात अमरीकी नौसैनिक जहाज़ों को अपने बंदरगाहों में छुट्टियाँ बिताने और मनोरंजन करने का अधिकार दे दिया है।

सुदूरपूर्व और प्रशांत क्षेत्र में अमरीका के 300 से भी अधिक सैनिक अड्डे हैं। इनमें से 120 जापान में हैं जिसमें से 30 बड़े सैनिक अड्डे हैं। इसके अलावा दक्षिण कोरिया में 40 और आस्टेलिया में बीस अड्डे है।

अब अमरीका की नज़र माइक्रोनेशिया पर है। क़रीब दो हज़ार द्वीपों में फैला और एक लाख तीस हज़ार की आबादी वाला यह द्वीप समूह आस्ट्रेलिया और दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच एक पुल की तरह है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1947 में अमरीका को इस क्षेत्र का ट्रस्टी नियुक्त किया था और उस पर 1981 तक इस क्षेत्र को स्वतंत्र और स्वशासी देश के रूप में विकसित करने की जिम्मेदारी सौंपी थी। लेकिन अमरीका अपने इस वायदे को पूरा करने में असफल रहा। अमरीका की 'न्यासी' की भावना केवल माइक्रोनेशिया में अमरीकी नौसैनिक अड्डे की एक श्रृंखला बनाने तक ही सीमित रही जिससे प्रशांत के पूरे क्षेत्र पर अपना नियंत्रण रख सके।

पश्चिमी समाचारपत्रों में छपी खबरों के अनुसार अमरीका ने पलाउ द्वीप पर एक नौसैनिक अड्डा बनाया है जहाँ ट्राइडेंट प्रक्षेपास्त्रों से लैस पनडुब्बियों की

मरम्मत की जाती है।

अमरीका ने साईपेन में वंदरगाह और सैनिक हवाई पट्टी, वावेलथ्वाप द्वीप पर नाभिकीय और रासायनिक हथियारों को रखने के गोदाम, तिनियन में हवाई पट्टी और अन्य सैनिक प्रतिष्ठान, मार्शल द्वीप पर गोलावारूद के डिपो और संचार केन्द्र गुआम में वी-52 जैसे भारी लड़ाकू विमानों के लायक हवाई पट्टी और नौसैनिक अड्डे का भी निर्माण किया है।

फ़िलीपीन्स में अमरीका के 23 सैनिक अड्डे हैं। इसमें देश की राजधानी मनीला सिर्फ़ एक सौ किलोमीटर दूर क्लार्क फ़ील्ड में बना विशाल अड्डा और सुविक की खाड़ी में बना नौसैनिक अड्डा भी शामिल है।

क्लार्क फ़ील्ड हवाई अड्डा 530 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। यह अड्डा अमरीका के वाहर बना विशालतम हवाई अड्डा है। सुविक की खाड़ी में बना नौसैनिक अड्डा दक्षिण पश्चिम एशिया में अमरीका की एक वड़ी नौसैनिक चौकी है। विएतनाम युद्ध के समय सातवें वेड़े ने यहीं से अपनी कार्रवाइयाँ की थीं।

1979 में अमरीका और फ़िलीपीन्स के वीच एक नया समझौता हुआ। इस समझौते के तहत उन अड्डों को अमरीका को सौंपे गये फ़िलीपीन्स के अड्डे कहा गया। लेकिन वास्तव में इस समझौते से स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया, क्योंकि ये समझौता अमेरिका द्वारा इन अड्डों के इस्तेमाल पर कोई रोक नहीं लगाता। विदेशी समाचारपत्रों के अनुसार दो अड्डों में अमरीका ने अपने नाभिकीय हथियारों के डिपो बना रखे हैं। अमरीका और फ़िलीपीन्स ने अपने सैनिक संवंधों को और मज़बूत वनाने के लिए 1982 के वसंत में इस वात पर सहमति व्यक्त की दोनों देशों के रक्षा मंत्रियों के वीच वार्षिक वैठकें हुआ करेंगी। इस तरह की पहली बैठक मार्च 1984 में हुई। इस वैठक में फ़िलीपीन्स के राष्ट्रीय सुरक्षा मंत्री जान पान्स एनरिले और अमरीकी रक्षा मंत्री कैस्पर वाइनवर्गर ने हिस्सा लिया। वैठक के वाद अमरीकी रक्षा मंत्री ने स्पष्ट रूप में कहा कि अमरीकी रक्षा नीति में पश्चिमी प्रशांत क्षेत्र की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि यह हिंद महासागर में सेंटकाम की ज़िम्मेदारी के क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

कुल मिलाकर प्रशांत क्षेत्र में वने अमरीकी वायु और नौसैनिक अड्डों का काम 'विशेष हितों वाले क्षेत्र' को किसी ख़तरे की स्थिति में अमरीकी सशस्त्र सेनाओं के विभिन्न अंगों को दक्षिण-पूर्व एशिया, दक्षिण-पश्चिम एशिया और सुदूर-पूर्व के क्षेत्रों में शीघ्रता से स्थानांतरण को सुनिश्चित करना है। वर्तमान अमरीका प्रशासन सुदूर पूर्व और प्रशांत क्षेत्र के देशों में अपने प्रभाव को और मज़वूत करने तथा वढ़ाने का प्रयास कर रहा है। जैसा कि अमरीकी उपराष्ट्रपति जार्ज बुश, रक्षा मंत्री कैस्पर वाइनबर्गर और वाशिंगटन के अन्य बड़े अधिकारियों द्वारा इस क्षेत्र की बारम्बार की यात्राओं से स्पष्ट है।

अमरीकी रक्षा नीति में थाईलैंड एक और महत्वपूर्ण देश है। अमरीका ने 1983 में थाईलैंड को 66 करोड़ डालर के बराबर सैनिक सहायता दी थी। 1985 में यह राशि बढ़कर दस करोड़ डालर तक पहुँच चुकी है। थाईलैंड को दी गई सैनिक सहायता का उपयोग अमरीका कम्पूचियाई गणतंत्र के ख़िलाफ़ संघर्ष कर रहे पोल पोट को मदद देने में कर रहा है।

इस सैनिक सहायता के बदले में अमरीका थाईलैंड में बने उन अनेक सैनिक अड्डों पर अपना नियंत्रण बनाये रखना चाहता है जिनका कि उपयोग उसने विएतनाम युद्ध के दौरान किया। जहाँ तक अमरीकी सातवें बेड़े का प्रश्न है उसके जहाज़ बिना किसी रोक-टोक के थाईलैंड के बंदरगाहों पर आ-जा सकते हैं।

एडमिरल विलियम क्रो जिनका कि पहले भी उल्लेख हो चुका है ने दिसम्बर 1983 में बैंकाक में एक संवाददाता सम्मेलन में कहा था कि अमरीका दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में रसायनिक हथियारों और क्रूज प्रक्षेपास्त्रों को तैनात करने की संभावनाओं का अध्ययन कर रहा है।

इस क्षेत्र के विकासशील देश, अमरीका को अपनी सीमाओं या निकट के समुद्र में अमरीका को अपने अड्डे अथवा अन्य सैनिक प्रतिष्ठान बनाने की इजाज़त देकर, अमरीकी जहाज़ों को अपने बंदरगाहों का इस्तेमाल करने या अपने समुद्री क्षेत्र में लड़ाकू गश्त कार्रवाइयों की इजाज़त देकर, युद्ध और शांति जैसे गंभीर मामलों में निर्णय करने के अपने अधिकार को अमरीका के हाथों में सौंप रहे हैं जो उनके अपने लोगों के भविष्य के लिए एक अहम मामला है। जिन देशों में ऐसे क्षेत्र बनाये गए हैं जिनका कि कल आक्रामक कार्रवाइयों में उपयोग हो सकता है कभी भी अपने आपको अपने राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध नाभिकीय युद्ध में घसीटा हुआ पा सकते हैं। समाजवादी देशों को अपना निशाना बनाये हुए अमरीकी प्रक्षेपास्त्र जिन अड्डों पर तैनात हैं वे एशिया के विकासशील देशों के लिए खास करके भयंकर ख़तरा बने हुए हैं। इन देशों को जवाबी नाभिकीय हमले से तुरंत निशाना बनने का ख़तरा है।

सैनिक क्षेत्र में सहयोग भविष्य में संघर्ष के बीज बोता है। वाशिंगटन की राजनैतिक-सैनिक योजनाएँ नये सैनिक अड्डों के निर्माण या पहले से बने सैनिक अड्डों के विकास तक ही सीमित नहीं हैं। इसका मुख्य उद्देश्य इस क्षेत्र के देशों को अमरीकी अँगूठे के नीचे रखना और उनका सक्रिय सहयोग प्राप्त करना और विकास के स्वतंत्र रास्ते पर चलने वाले देशों के बीच दुश्मनी के बीज बोना है। उदाहरण के लिए, बड़े अमरीकी और जापानी अधिकारी 'प्रशांत-समुदाय' के गठन की योजना पर विचार कर रहे हैं। यह संगठन प्रशांत क्षेत्र में वैसी ही भूमिका निभाएगा जैसी कि अटलांटिक क्षेत्र में नाटो की रही है।

इस नये सैनिक गुट की स्थापना की जिम्मेदारी जापान को सौंपी गयी है

मानचित्र में, विदेशों में अमरीका के प्रमुख सैनिक अड्डों के साथ-ही-साथ सेना और नौसैनिक अड्डों, पर्शिंग-2 के अड्डों, भूमि से छोड़े जाने वाले क्रूज़ प्रक्षेपास्त्रों के अड्डे, नौसैनिक अड्डों के अलावा गुप्त सूचना एकत्र करने, संचार, नौ-परिचालन और रेडार तंत्र-सज्जा भी दर्शाई गयी है।
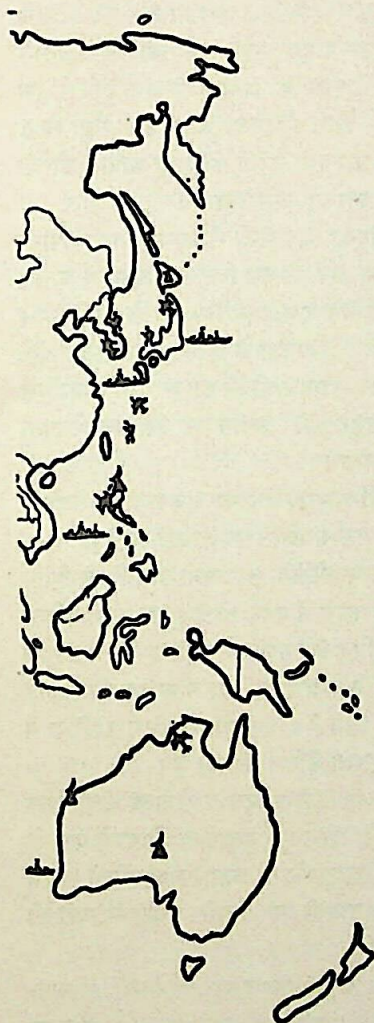
जिसके पास अत्यधिक विकसित सैनिक और तकनीकी क्षमता है। इस क्षेत्र में अमरीकी सैनिक उपस्थिति के लक्ष्यों और उसके मूल उद्देश्यों को जापान में तैनात अमरीकी सेनाओं के प्रमुख ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि जापान में अमरीकी सैनिक उपस्थिति का उद्देश्य अमरीकी सामरिक हितों की रक्षा करना है। यह स्पष्ट स्वीकारोक्ति स्पष्ट करती है कि अमरीका पश्चिमी यूरोप की तरह जापान को भी अमरीकी नाभिकीय बंदी में बदलने की योजना पर चल रहा है।

13 सितम्बर, 1984 को शुरू हुए संयुक्त अमरीकी सैनिक अभ्यास जापानी क्षेत्र के बहुत बड़े हिस्से में किये गये। होनशू द्वीप पर दस दिन तक अभ्यास चला। इस सैनिक अभ्यास के लिए अमरीका से सैनिक टुकड़ियाँ विमानों से लाई गयीं। फ़िलीपीन्स में तैनात एफ़-4 क़िस्म के लड़ाकू विमानों के एग-एक स्कैवड्रन और विभिन्न प्रकार का यहाँ लाये गये तैनिक साज-सामान को भी इस अभ्यास में शामिल किया गया। ओकीनाका पर उड़ाकों को समुद्र और ज़मीन पर विभिन्न ठिकानों पर निशाना लगाने का अभ्यास करवाया गया।

अमरीका और दक्षिण कोरिया के सैनिक-राजनीतिक संबंध दोनों देशों के बीच सैनिक संबंधों के लिए 1953 में हुए एक समझौते पर आधारित है।

इस समझौते के तहत अमरीका ने दक्षिण कोरिया को अपनी सेनाओं को तैयार करने और उन्हें अमरीकी हथियारों से लैस करने में मदद की है। इस समय दक्षिण कोरियाई सेना में 66 लाख एक हजार सैनिक हैं। इसके अलावा क़रीब 42000 अमरीकी सैनिक वहाँ तैनात हैं। अमरीका ने दक्षिण कोरिया में क़रीब एक हज़ार सामरिक नाभिकीय हथियार भी तैनात किये हैं। इस समय दक्षिण कोरिया में अमरीका के 30 हवाई अड्डे और क़रीब 200 सैनिक संस्थान हैं।

2 फ़रवरी, 1981 को वाशिंगटन में अमरीकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन और दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति चुन इ ह्वान के बीच हुई मुलाक़ात से दोनों देशों के बीच संबंध और मज़बूत हुए। अमरीकी राष्ट्रपति ने कहा कि अमरीकी पक्ष ने दक्षिण कोरिया से अमरीकी फ़ौजियों की वापसी या उनकी संख्या में कमी की संभावनाओं से इनकार किया।

बहुत पहले 1981 में ही अमरीका ने वायदा किया था कि किसी आपात-कालीन स्थिति में अमरीका दक्षिण कोरिया में एकत्रित दो अरब डालर के हथियार तुरंत दक्षिण कोरिया को सौंप देगा। आधुनिक हथियार देना और सैनिक सहायता बढ़ायेगा। उदाहरण के लिए अमरीका ने दक्षिण कोरिया को 10 करोड़ डालर मूल्य के 36 आधुनिक एफ़-16 लड़ाकू बमवर्षक विमान बेचने का फ़ैसला किया है। केवल 1972 में अमरीका ने दक्षिण कोरिया को 21 करोड़ डालर मूल्य की सैनिक सहायता दी और 6-8 फ़रवरी, 1983 तक सियोल की यात्रा पर गये अमरीकी विदेश मंत्री जार्ज शुल्ज ने घोषणा की कि इस सहायता को और भी

वढ़ाया जाएगा। 3 मई, 1983 को समाचारपत्र 'वाशिंगटन पोस्ट' में खवर छपी कि रीगन प्रशासन दक्षिण कोरिया में न्यूट्रान हथियार तैनात करने पर विचार कर रहा है। इनमें लैंस प्रक्षेपास्त्र और अमरीकी तथा दक्षिण कोरियाई सैनिकों द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले 203 एम एम की तोपों के लिए न्यूट्रान गोले भी शामिल होंगे।

दोनों देशों की सेनाओं के बीच 'टीम स्पिरिट' के गुप्त नाम से हर वर्ष होने वाले संयुक्त अभ्यासों का वढ़ता हुआ दायरा दो सहयोगियों के बीच वढ़ते हुए सैनिक सहयोग का जीता-जागता उदाहरण है। 1982 में हुए इन टीम स्पिरिट अभ्यासों में दक्षिण कोरिया के एक लाख और अमरीका के 62 हज़ार सैनिकों ने हिस्सा लिया था। अमरीकी रक्षामंत्री कैस्पर वाइनवर्गर भी इन अभ्यासों के दौरान उपस्थित थे। टीम स्पिरिट-83 के अभ्यास एक फ़रवरी से अप्रैल 83 के अंत तक हुए। ये अभ्यास दक्षिण कोरिया के पूरे क्षेत्र पर हुए इनका दायरा पिछले अभ्यास की तुलना में कहीं ज्यादा था। अमरीकी समाचारपत्रों की खवरों के अनुसार इन अभ्यासों (युद्धखेलों) में भाग लेने के लिए अमरीकी छठी सेना की टुकड़ियों, प्रथम आर्मी कोर के कर्मचारियों, सातवीं इन्फ़ैंट्री डिवीज़न, तत्काल तैनाती दल का एक अंग रही जाने वाली 82वीं एयरवोर्न डिवीज़न और अन्य टुकड़ियों को विमानों से यहाँ लाया गया था।

अमरीकी दक्षिण कोरियाई सेनाओं का नवाँ संयुक्त अभ्यास टीम स्पिरिट-84 1 फ़रवरी, 84 को शुरू हुआ। दक्षिण कोरिया में स्थायी रूप से तैनात 40 हज़ार अमरीकी सैनिकों की स्थिति और मजवूत वनाने के लिए 36,400 और सैनिकों को विमानों से लाया गया। कुल मिलाकर इन उत्तेजक युद्धखेलों में दो लाख सात हज़ार से भी अधिक अधिकारियों और कर्मचारियों के अलावा वड़ी संख्या में सैनिक साज-सामान, लड़ाकू विमानों, नौसैनिक इकाइयों ने हिस्सा लिया। इन अभ्यासों में भाग लेने के लिए कुछ कर्मचारियों और सैनिक साज-सामान को जापान में स्थित अमरीकी सैनिक प्रतिष्ठानों की मार्फ़त अमरीका से लाया गया। इन अभ्यासों का उद्देश्य अमरीका और दक्षिण कोरिया द्वारा वहुत वड़े क्षेत्र संयुक्त रूप से आक्रामक कार्रवाइयाँ करना और थल, नौ और वायुसेनाओं की इकाइयों के वीच आपसी सहयोग और तालमेल को वढ़ावा देना था।

जैसा कि हम पहले वता चुके हैं कि के पाकिस्तानी अधिकारियों ने अमरीका के साथ लाखों डालर मूल्य हथियारों की सप्लाई करने का एक समझौता किया है। इसके तहत इस्लामावाद को अत्यंत आधुनिक स्पैरो प्रक्षेपास्त्र मिलेंगे जिन्हें पहले ही अमरीका से खरीदे गये लड़ाकू वमवर्षकों एफ़-16 में लगाया जाएगा। इसके अलावा पाकिस्तान को पनडुब्बियाँ, विध्वंसक हारपून प्रक्षेपास्त्र दिये जा रहे हैं, जिन्हें पाकिस्तानी नवी जहाजों में लगाया जायेगा।

पाकिस्तान को इन आक्रामक हथियारों की आवश्यकता आखिर क्यों है ?

अमरीकी सहायता से पाकिस्तान की सैनिक शक्ति को वढ़ाने का मुख्य कारण वाशिंगटन द्वारा दक्षिण एशिया और हिंद महासागर क्षेत्र में अपनाई जा रही सामरिक योजना में पाकिस्तान को सौंपी गयी भूमिका में मिल सकता है। पाकिस्तान को अत्याधुनिक हथियारों की सतत और तेज़ आपूर्ति उन लोगों के लिए कड़ी चुनौती है, जो हिन्द महासागर को शांति-क्षेत्र घोषित किये जाने के लिए अभियान चला रहे हैं। यह गुटनिरपेक्ष आंदोलन और एशिया में शांति के लिए खतरा है।

'कभी न डुवाये जा सकने वाले विमानवाही पोत' ताईवान को अमरीकी सैनिक योजना में एक महत्वपूर्ण स्थान सौंपा गया है। इसकी भौगोलिक स्थिति इसे उत्तर-पूर्व एशिया को वाकी एशियाई महाद्वीप से जोड़ने वाले समुद्री रास्ते पर संभावित नियंत्रण रखने में सहायक हो सकती है।

लम्वे समय तक अमरीका और ताईवान के वीच सैनिक-राजनीतिक संवंध 1954 में हुई परस्पर सहयोग की संधि पर आधारित रहे। इसके तहत अमरीका ने ताईवान को अपनी सेना को मज़वूत वनाने और अमरीकी हथियारों से लैस करने में व्यापक मदद की। इस समय ताईवान की सेना में साढ़े चार लाख कर्मचारी हैं। 1979 में राष्ट्रपति कार्टर ने 1954 में हुई संधि को भंग कर दिया लेकिन उसी वर्ष अमरीका ने एक क़ानून पारित किया जिसके तहत अमरीका ने ताईवान को पर्याप्त सुरक्षा की गारंटी प्रदान की। उसके वाद से ताईवान और अमरीका के संवंध केवल ताईवान को अमरीकी हथियारों की विक्री तक ही सीमित है।

पेंटागन अपनी सैनिक नीतियों में 'आसियान' के सदस्य देशों को भी शामिल करने की कोशिश की है। 'आसियान' के सदस्य देशों को अपने आधुनिक हथियार प्रणालियों को खरीदने के लिए दवाव डालकर अमरीका आशा करता है कि वह इस क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग संगठन को अमरीकी संरक्षण में एक सैनिक गुट में बदल लेने में सफल हो सकेगा। उदाहरण के लिए सिंगापुर, थाईलैंड और मलेशिया को की गई हथियारों की विक्री में आधुनिक एफ़-17 लड़ाकू वमवर्षक, और अन्य हथियार प्रणालियाँ यहाँ तक कि 'अवाक्स' विमान शामिल हैं। सिंगापुर को इस प्रकार के विमानों की विक्री खास करके उल्लेखनीय है क्योंकि यह विश्वास करना कठिन है कि एशिया के इस छोटे से गणतंत्र को वास्तव में इस प्रकार के अति-आधुनिक विमान की वास्तव में ज़रूरत है।

सवसे बड़ी वात तो यह है कि फ़िलीपीन्स से एक समाचारपत्र 'बुलेटिन' टुडे ने खबर दी है कि 'आसियान' के देशों को अगले दस वर्षों में हथियारों की बिक्री एक हज़ार करोड़ डालर तक पहुँच जाएगी। इसकी तुलना में पिछले पाँच वर्षों में इन देशों को केवल 300 करोड़ डालर की ही आपूर्ति हुई है।

उपरोक्त वर्णित आँकड़ों से यह स्पष्ट हो जाता है कि एशियाई देशों के बारे में अमरीकी नीति इस क्षेत्र में अमरीकी सैनिक उपस्थिति को बढ़ाने, बहुत से स्वतंत्र एशियाई देशों पर दवाव डालकर उन्हें अपने साथ सैनिक सहयोग बढ़ाने को राज़ी करने और सोवियत संघ तथा अन्य समाजवादी देशों के ख़िलाफ़ सैनिक गुट बनाने की है। दूसरे शब्दों में अमरीकी नीति का लक्ष्य इस क्षेत्र के देशों के बीच मतभेद पैदा करने और एशिया के सैनिक-राजनीतिक स्थिति को अस्थिर बनाना है।

अमरीका द्वारा एशिया में अपनी सैनिक उपस्थिति को बढ़ाना और वहाँ बड़े पैमाने पर विध्वंस करने वाले हथियारों, जिनमें नाभिकीय हथियार भी शामिल हैं, इस बात को स्पष्ट करता है कि अमरीका क्यों ऐसी नीति पर चल रहा है और ऐसा करना एशिया में ही क्यों पूरी दुनिया में लोगों के मन में संदेह जागृत करने में असफल नहीं रह सकता।

अमरीका द्वारा अपनाई जा रही ख़तरनाक सैन्योन्मुख नीतियों, जिनमें उसकी एशिया के बारे में नीति भी शामिल है, को लेकर विभिन्न सरकारों, सार्वजनिक संगठनों और आंदोलनों ने कड़ा विरोध व्यक्त किया है। यहाँ तक कि संयुक्त राष्ट्र की कार्यसूची में अनेक ऐसे मुद्दे हैं जो इस भूग्रह के बारे में लोगों की वास्तविक चिंता को प्रदर्शित करते हैं। अतः यह स्वाभाविक ही था कि 1981 में नाभिकीय विनाश निवारण घोषणापत्र को स्वीकार करने के बाद संयुक्त राष्ट्र महासभा के 38वें अधिवेशन में 'नाभिकीय युद्ध की निन्दा' की घोषणा को मंजूर किया गया।

संयुक्त राष्ट्र महासभा के 1984 में हुए 39वें सत्र में 60 से अधिक ऐसे प्रस्तावों को स्वीकार किया, जिनका मक़सद हथियारों और ख़ास करके नाभिकीय हथियारों को सीमित करना या घटाना था। इस अधिवेशन में फिर एक बार अमरीका और उसके साथियों से अपील की गई है कि वे सोवियत संघ द्वारा नाभि-कीय हथियारों के पहले इस्तेमाल नहीं करने की घोषणा के आदर्श के अनुरूप कार्य करने की घोषणा करें। यह तो एक ऐसी आदर्श ज़िम्मेदारी है, जिसे अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून का दस्तावेज़ बनाया जाना चाहिए। सोवियत संघ द्वारा रखे गये उस विचार का स्वागत करने के अनेक प्रस्ताव आए, जिसमें नाभिकीय शक्तियों वाले देशों के बीच संबंधों को निर्देशित करने के लिए कुछ आदर्श स्थापित किये जाने की बात कही गयी थी। इन प्रस्तावों में सोवियत संघ के विचार को वास्तविकता और जिम्मेदारी का प्रमाण कहा गया था।

संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों ने भारी बहुमत से इन प्रस्तावों को स्वीकार किया। अमरीका और उसके साथियों ने 26 प्रस्तावों के विपक्ष में मतदान किया। दस अन्य प्रस्तावों के खिलाफ़ एकमात्र वोट अमरीका ने ही दिया।

कुल मिलाकर इस अधिवेशन ने यह स्पष्ट किया कि संयुक्त राष्ट्र के सदस्य-

देश शांति और सहयोग की नीति का ज़ोरदार समर्थन करते हैं।

नाभिकीय विरोधी आंदोलनों का उदय उतना ही पुराना है जितना कि 40 वर्ष पहले एशिया में हुई एक घटना। यह घटना थी अगस्त 1945 में हीरोशिमा और नागासाकी पर हुई बर्बरतापूर्ण बमबारी। अणुबमों के परिणामों से भयभीत जापान के लोगों ने इनको दुनिया की नज़रों में लाने के लिए ज़ोरदार प्रयास किए। जापान ने नाभिकीय-विरोधी आंदोलनों के कार्यकर्ताओं की कार्यवाहियों के परिणामस्वरूप दुनिया के अन्य देशों में भी नाभिकीय विरोधी आंदोलनकारी संगठनों की स्थापना हुई।

एशिया सहित दुनिया के विभिन्न देशों की सरकारें इन लक्ष्यों को मानती हैं और वे नाभिकीय-विरोधी संगठनों की कार्रवाइयों का समर्थन करती हैं। आज की वास्तविकता का संकेत यही है कि इस बारे में जागृति बढ़ रही है कि नाभिकीय युद्ध का बढ़ता हुआ खतरा हाल ही में आज़ाद हुए विकासशील और गुटनिरपेक्ष देशों के लिए एक चुनौती है। इस जागृति की फिर से पुष्टि संयुक्त राष्ट्र महासभा के 39वें अधिवेशन के दौरान हुई जिसमें एशिया के देशों सहित अधिकतर गुट-निरपेक्ष देशों ने साम्राज्यवाद विरोधी और उपनिवेशवाद विरोधी रुख बनाये रखा। इन राष्ट्रों ने न केवल समाजवादी देशों द्वारा रखे गये मूल प्रस्तावों का समर्थन किया बल्कि स्वतः ही अनेक महत्वपूर्ण पहल कीं। इन पहलों ने दिखा दिया कि समाजवादी देशों और विकासशील देशों के मूल हित मूलतः एक जैसे ही हैं। जैसे कि दोनों ही नाभिकीय युद्ध के ख़तरे को समाप्त करने के लिए समान रूप से चिंतित हैं। और वे शांति की रक्षा और साम्राज्यवादी हमले के खिलाफ़ अपने लोगों की हितों की रक्षा करने के लिए समान रूप से चिंतित हैं। इस प्रकार, इस सिद्धांत को कि गुटनिरपेक्ष देश पश्चिम और समाजवादी देशों से बराबर दूरी पर हैं वास्तविक तथ्यों ने फिर एक बार नकार दिया है।

इस बारे में कुछ कहने की जरूरत नहीं है कि नाभिकीय हथियारों से लैस अमरीकी जंगी जहाज़ों का अन्य देशों की सीमाओं के निकट तैनात होने से उनकी सुरक्षा को कितना ख़तरा है। पूरी दुनिया के लोग तेज़ी से इस ख़तरे के प्रति सतर्क होते जा रहे हैं। इससे अधिक और क्या हो सकता है कि वाशिंगटन के अधिकृत प्रवक्ताओं और पेंटागन के बड़े अधिकारियों को एक से अधिक बार यह मानने के लिए मजबूर होना पड़े कि अनेक देशों में, जिसमें अमरीका के एशिया के सहयोगी देश भी शामिल हैं, अमरीकी नौसैनिक उपस्थिति का विरोध किया गया है।

अमरीका ने इस प्रकार की 'बाधाओं' के खिलाफ़ एक 'स्थायी' प्रतिक्रिया जैसी चीज़ बना ली है। उदाहरण के लिए, न्यूज़ीलैंड की नयी लेबर सरकार द्वारा नाभिकीय हथियारों से लैस अमरीकी जंगी जहाज़ों को वहाँ के बंदरगाहों का इस्तेमाल करने या उनकी समुद्री सीमा में प्रवेश करने की इजाज़त नहीं देने पर प्रतिक्रिया

व्यक्त करते हुए अमरीकी प्रशासन ने बुरा-भला कहा और आर्थिक तथा राजनीतिक प्रतिबंध लगाने की धमकी दी। वाशिंगटन अब इस बात को लेकर गंभीर रूप से चिंतित है कि इस क्षेत्र के अन्य देशों में भी नाभिकीय विरोधी आंदोलन ज़ोर पकड़ता जा रहा है और अन्य देश भी कहीं न्यूज़ीलैंड के रास्ते पर न चल पड़ें।

जापान में शांति आंदोलन को इस क्षेत्र में नाभिकीय हथियारों की संख्या में और वृद्धि किये जाने से उत्पन्न खतरे के बारे में बढ़ती हुई जागृति को और बल मिला है। जापानी शांति आंदोलन नाभिकीय खतरे को समाप्त करने और जापान के साथ अमरीकी सैनिक संधि को समाप्त करने के पक्ष में है। क्रूज प्रक्षेपास्त्र विरोधी नया संगठन बना है और नाभिकीय हथियारों से लैस अमरीकी जहाज़ों को जापानी बंदरगाहों में रोक लगाने की माँग को लेकर हस्ताक्षर अभियान चलाया जा रहा है। एशिया के अन्य देशों में भी युद्ध-विरोधी आंदोलन ज़ोर पकड़ रहे हैं।

पूरी दुनिया के वैज्ञानिक भौतिकशास्त्री इस खतरे के बारे में जन-जागृति बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। अमरीका द्वारा अपने नाभिकीय हथियारों के ज़खीरे को बढ़ाते जाने की नीति के परिणामस्वरूप ही पूरी पृथ्वी को खतरा उत्पन्न हुआ है। इस आंदोलन में वैज्ञानिकों की महत्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि विभिन्न संगोष्ठियों में पढ़े गए पर्चों और अन्य वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं में उन भयंकर परिणामों की चर्चा की गई है जो यदि कभी भी नाभिकीय हथियारों का इस्तेमाल हुआ तो निश्चित रूप से सामने आएँगे।

इन वैज्ञानिकों के परिणामों को झुठलाने के प्रयास करते हुए कुछ राजनीतिज्ञों और सामरिक विशेषज्ञों विशेषकर अमरीकियों ने दावे किये हैं कि 'सीमित' नाभिकीय युद्ध' संभव है और नाभिकीय विस्फोटों से दुनिया का कोई विशेष हिस्सा प्रभावहीन रहेगा। जैसाकि हम पहले ही कह चुके हैं कि व्यवहार में इस प्रकार का कोई क्षेत्र दुनिया या एशिया में नही बचा रहेगा।

वैज्ञानिकों की चिंता और उत्तरदायित्व

वैज्ञानिकों और भौतिकशास्त्रियों ने सबसे पहले इस बात का अनुभव किया कि नाभिकीय हथियारों से मानवता के भविष्य को उत्पन्न खतरे की ओर दुनिया का ध्यान आकर्षित करने के लिए ज़ोरदार प्रयासों की आवश्यकता है। भौतिक शास्त्रियों द्वारा किये गये वैज्ञानिक अनुसंधानों से नाभिकीय हथियारों की विस्तृत विध्वंसक क्षमता के बारे में वास्तविक अनुमानों का पता चला और इस बात की

जानकारी मिली कि इन हथियारों के इस्तेमाल से जिस प्रकार के विनाशकारी परिणाम सामने आएँगे।

आइये, नाभिकीय हथियारों के संभावित इस्तेमाल से उत्पन्न परिणामों का पता लगाने के लिए पिछले 40 वर्षों में हुए प्रयासों की संक्षिप्त चर्चा करें।

अगस्त 1945 में हीरोशिमा और नागासाकी पर अणुवम गिराये जाने के वाद विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों ने इन विस्फोटों के जनसंख्या पर और कुछ हद तक पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों की जाँच की। विभिन्न अनुमानों के अनुसार विस्फोट और उससे उत्पन्न गर्मी के परिणामस्वरूप हीरोशिमा में पहले दिन ही 45 हज़ार लोग मारे गये। हीरोशिमा और नागासाकी में कुल मिलाकर दो लाख 73 हज़ार लोग मारे गये और क़रीब एक लाख 95 हज़ार विकिरण से उत्पन्न वीमारियों से वीमार हुए। वाद के वर्षों में अणुवम गिराये जाने से मरने वालों की संख्या कई गुना वढ़ी, क्योंकि वहुत से लोग विकिरण से उत्पन्न ल्युकेमिया और अन्य वीमारियों से मरे। इतनी वड़ी संख्या में हुई मौतों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि पर्यावरण पर इसका प्रभाव वहुत कम पड़ा होगा। लेकिन उस समय भी वैज्ञानिकों ने पाया कि हीरोशिमा और नागासाकी में तूफ़ानी आग और 'काली वरसात' हुई। काली वरसात से तात्पर्य रेडियो-धर्मी पदार्थों के अवशेषों के गिरने से है। तूफानी हवाओं ने इन पदार्थों को वहाँ से बहुत दूर ले जाकर पटका, जहाँ कि वास्तव में विस्फोट हुए।

छठवें दशक के अन्त और सातवें दशक की शुरुआत में पर्यावरण में किये गये आणविक और वाष्प-नाभिकीय परीक्षणों ने एक वार फिर से नाभिकीय विस्फोटों के परिणामों की जाँच का सिलसिला शुरू करवा दिया। ये अध्ययन मूलतः पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों पर केन्द्रित रहे क्योंकि परीक्षणों के दौरान कुल मिलाकर इतने विस्फोट किये गये कि उनके परिणाम हीरोशिमा और नागासाकी पर गिराये गये अणुबमों के परिणामों से हज़ारों गुना ज़्यादा हो चुके थे।

सातवें दशक में वैज्ञानिकों ने इस बात का पता लगा लिया था कि नाभिकीय परीक्षणों से वायुमंडल में ओज़ोन की पर्त में कमी आ सकती है। पर्यावरण में नाभिकीय परीक्षणों के प्रभावों की पहचान करना एक लम्वी और जटिल प्रक्रिया सिद्ध हुई। सातवें दशक की शुरुआत में इकट्ठे किये गये आँकड़ों का विश्लेषण करने के विशेष तरीक़ों का पता पिछले कुछ वर्षों में ही लग पाया। इन विश्लेषणों से पता लगा कि ओज़ोन के अनुपात में दो से तीन प्रतिशत तक की कमी आयी, जो सिद्धान्त रूप में किये गये विवेचन से काफी नज़दीक साबित हुआ। पर्यावरण में किये गये नाभिकीय विस्फोटों से हवा में गर्मी की मात्रा दो हज़ार डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुँच जाती है। इस तापमान पर सामान्यतः प्रभावहीन रहने वाली ऑक्सीजन और नाइट्रोजन नाइट्रिक ऑक्साइड बनाती है। एक एम०टी० यानी दस लाख

टन टी एन टी के बराबर क्षमता वाले एक नाभिकीय विस्फोट से पन्द्रह हज़ार टन नाइट्रिक ऑक्साइड उत्पन्न होते हैं, जो पर्यावरण को भेदकर एक ही प्रक्रिया में हज़ारों-लाखों ओज़ोन कणों का विनाश कर सकते हैं। एक अनुमान के अनुसार यदि नाभिकीय हथियारों के वर्तमान जखीरे का इस्तेमाल किया गया तो ओज़ोन की सम्पूर्ण पर्त का 70 से 80 प्रतिशत भाग समाप्त हो सकता है।

ओज़ोन पर्त की कमी से अल्ट्रा-वायलेट किरणों की मात्रा बढ़ सकती है, जिससे त्वचा के कैंसर की मात्रा बढ़ सकती है। सूर्य की चकाचौंध से आँखों की रोशनी जा सकती है, कृषि उत्पादन की दर कम हो सकती है। यदि वर्तमान नाभिकीय हथियारों का खुलकर इस्तेमाल हो तो ओजोन की पर्त में 80 प्रतिशत से भी अधिक की कमी हो सकती है तो इससे पृथ्वी पर अल्ट्रा-वायलेट विकिरण की तीव्रता बढ़कर उस स्तर तक पहुँच सकती है, जिस स्तर पर मनुष्य और पशुओं की मृत्यु हो सकती हो और निचले स्तर के जीव-जन्तुओं में पैदायशी परिवर्तन आने लगे।

आठवें दशक में अनुसंधानों का केन्द्रण इस क्षेत्र में रहा कि बड़े नाभिकीय हथियारों का इस्तेमाल किया गया तो बड़े शहरों को पहुँचने वाली क्षति और सम्भावित मौतें कितनी होंगी। उदाहरण के लिए, संयुक्त राष्ट्र द्वारा नाभिकीय हथियारों के बारे में किये गये एक विस्तृत अध्ययन में कहा गया है कि यदि किसी काम के घंटों में अर्थात् जब शहर में अधिकतम मात्रा में लोग होते हैं, दिन में न्यूयार्क में उतनी ही क्षमता के बम का विस्फोट किया जाए, जितनी क्षमता के बम ने नागासाकी शहर को नेस्तनाबूद कर दिया था, तो दस लाख से भी अधिक व्यक्तियों की तुरन्त मृत्यु हो जाएगी। इसी अध्ययन में बताया गया है कि एक एम० टी० क्षमता के बम के विस्फोट से 250 वर्ग किलोमीटर में बसे एक शहर का सफ़ाया कर सकता है। किसी जंगली क्षेत्र में इसी प्रकार का एक विस्फोट अपनी प्रकाश किरणों और ऊष्मा के विकिरण से करीब एक हज़ार वर्ग किलोमीटर में आग लगा सकता है। सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा लगाये अनुमानों को 'नाभिकीय युद्ध : चिकित्सा और जीववैज्ञानिक परिणाम' पुस्तक में शामिल किये गये हैं। सोवियत वैज्ञानिकों की राय में यदि दस लाख की आबादी वाले किसी शहर पर एक एम०टी० क्षमता के बम का विस्फोट किया जाता है तो तीन लाख से अधिक व्यक्ति तुरन्त मर जाएँगे। करीब दो लाख घायल होंगे और इतनों को ही चोट लगेगी या आग में जलेंगे। इसके अलावा 80 प्रतिशत चिकित्सक और अन्य चिकित्सा कर्मचारी भी मारे जाएँगे क्योंकि आम तौर पर अस्पताल और क्लीनिक भी शहर के भीतरी क्षेत्रों में ही होते हैं। बचे हुए चिकित्सक उन सभी को डाक्टरी सुविधाएँ उपलब्ध कराने में सफल नहीं होंगे, जिनको उनकी आवश्यकता होगी। नाभिकीय युद्ध को रोकने के चिकित्सकों के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के सहअध्यक्ष

प्रोफ़ेसर वर्नाड लान ने एक बार कहा था कि यदि नाभिकीय युद्ध भड़क उठा तो आधुनिक चिकित्सा-पद्धति के पास बचे-खुचे लोगों के इलाज के लिए प्रतीक के रूप में भी कुछ नहीं है।

यदि एक बड़े शहर में एक एम०टी० क्षमता के एक बम की बजाए कम क्षमता वाले कई बमों का इस्तेमाल किया जाए तो उसका परिणाम और भी भयंकर हो सकता है। उपरोक्त वर्णित संयुक्त राष्ट्र संघ के अध्ययन के अनुसार यदि दशमलव चार एम० टी० क्षमता वाले एक बम की बजाए 40 के०टी० के दस बमों को दो किलोमीटर की दूरी के अन्तर से गिराया जाए तो उनसे विशेष रूप से लोगों के प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होने के सन्दर्भ में और भी ज़्यादा नुक़सान हो सकता है।

विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों ने विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संगोष्ठियों और बैठकों में नाभिकीय युद्ध से व्यापक क्षति, लाखों लोगों की मौत, बहुत बड़े क्षेत्र में रेडियो-धर्मिता, कृषि और उद्योगों को होने वाली हानि, खाद्य पदार्थों की ज़्यादातर आपूर्ति का नष्ट हो जाना, चिकित्सा प्रणाली का अस्त-व्यस्त हो जाना और इसी प्रकार के अन्य विनाशकारी प्रभावों का अध्ययन किया।

पिछले वर्षों में वैज्ञानिकों द्वारा की गयी कुछ अन्तर्राष्ट्रीय बैठकों का नीचे उल्लेख किया जा रहा है :

सोवियत संघ और अमरीका के प्रमुख चिकित्सा वैज्ञानिकों की पहल पर 1981 में एयरली, वर्जीनिया में नाभिकीय युद्ध को रोकने के लिए चिकित्सकों के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का पहला अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन में 11 देशों के प्रतिनिधि शामिल हुए। दूसरा अधिवेशन 1982 में इंग्लैंड में कैम्ब्रिज में हुआ। इसमें 32 देशों के प्रतिनिधि शामिल हुए। 1983 में एम्स्टरडम में हुए तीसरे अधिवेशन में 43 देशों के और 1984 में हेलसिंकी में हुए चौथे अधिवेशन में 50 से भी अधिक देशों के चिकित्सा विशेषज्ञ शामिल हुए।

1982 में रोम में आयोजित एक बैठक में 36 देशों की विज्ञान अकादमियों के प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इस बैठक में नाभिकीय-निरस्त्रीकरण पर विचार-विमर्श हुआ। बैठक में एक घोषणापत्र को मंजूरी दी गयी, जिसमें नाभिकीय हथियारों की निन्दा की गयी थी।

पुगवाश कांफ्रेंस की वारसा में हुए अधिवेशन में नाभिकीय युद्ध के खतरों के बारे में एक घोषणापत्र को मंजूरी दी गयी। इस पर प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले वैज्ञानिकों के हस्ताक्षर थे। इस घोषणापत्र में दुनिया के वैज्ञानिकों से ऐसे क़दम उठाने का आग्रह किया गया था, जिससे नाभिकीय युद्ध को होने के पहले ही रोका जा सके।

स्वीडन ने 'एम्बियो' पत्रिका का विशेषांक निकाला। मानवीय पर्यावरण के बारे

में प्रकाशित इस पत्रिका में नाभिकीय युद्ध से पर्यावरण, परिस्थिति-चिकित्सा और आर्थिक दुष्परिणामों के वारे में लेख छापे गये थे। इस पत्रिका के लिए सोवियत संघ, अमरीका, पूर्वी जर्मनी, व्रिटेन, फ्रांस और पश्चिम जर्मनी के वैज्ञानिकों ने लेख लिखे थे।

1983 में मास्को ने मानवता को नाभिकीय युद्ध के ख़तरे से वचाने और निरस्त्रीकरण और शान्ति के लिए कार्यरत वैज्ञानिकों के लिए एक राष्ट्रीय सम्मेलन की मेज़वानी की। 20 देशों के 500 से भी अधिक वैज्ञानिकों ने इस सम्मेलन में हिस्सा लिया। इन वैज्ञानिकों द्वारा सम्मेलन में पढ़े गये पर्चों को एकत्रित रख सोवियत विज्ञान अकादमी के वुलेटिन में प्रकाशित किया गया। इस सम्मेलन ने शान्ति और नाभिकीय खतरे के खिलाफ़ सोवियत वैज्ञानिकों की एक समिति गठित की गयी। सोवियत विज्ञान अकादमी के उपाध्यक्ष येवगेनी वेलीखोव को इस समिति का अध्यक्ष चुना गया।

वाशिंगटन ने 'नाभिकीय युद्ध के वाद की दुनिया' पर विचार करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय वैठक की मेज़वानी की। इसी वैठक के दौरान प्रमुख अमरीकी और सोवियत वैज्ञानिकों के बीच उपग्रह के माध्यम से वातचीत का भी आयोजन किया गया।

सेनेटर एडवर्ड कैनेडी और मार्क हैटफ़ील्ड द्वारा अमरीकी कांग्रेस में आयोजित एक संगोष्ठी में सोवियत वैज्ञानिकों ने नाभिकीय युद्ध के दुनिया पर पड़ने वाले प्रभावों के वारे में अपने अध्ययनों के निष्कर्षों की जानकारी दी।

वैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययनों से पता चलता है कि नाभिकीय हथियारों का विकास अव ऐसे स्तर पर पहुँच चुका है, जहाँ उनका इस्तेमाल पृथ्वी के प्राकृतिक पर्यावरण में ऐसे व्यापक मात्रा में परिवर्तन ला सकता है, जितना कि अब तक आयी प्राकृतिक आपदाओं से कुल मिलाकर भी नहीं हुआ होगा। यह भी सिद्ध हो चुका है कि परमाणु विस्फोटों से तुरन्त व्यापक विध्वंस, लाखों लोगों की मौत, वहुत वड़े क्षेत्र में रेडियो धर्मिता का प्रभाव, पर्यावरण को सुरक्षा प्रदान करने वाली ओज़ोन की पर्त में कमी, आग के अंधड़ों, शहर और जंगल की आग से उत्पन्न धुओं और कचरा उत्पन्न होने के अलावा दिखाई देने वाली चीज़ों का रूप और वायुमंडल तथा पृथ्वी की सतह का ताप पूरी तरह वदल सकता है।

अब हम 'नाभिकीय शीत' के सम्भावित प्रभावों पर विचार करेंगे।

'नाभिकीय शीत' आखिर है क्या ?

1983 में वैज्ञानिकों, राजनीतिज्ञों और संवाददाताओं में 'नाभिकीय शीत' शब्द का उपयोग चल पड़ा। इस शब्द के बारे में पहले कभी सुना नहीं गया था। सही मायनों में यह वैज्ञानिक शब्दावली नहीं है और न ही पत्रकारों द्वारा बनाया गया कोई वाक्य, बल्कि यह तो वैज्ञानिकों द्वारा दुनिया के जनमत और पृथ्वी पर रहने वाले हर व्यक्ति को दी जा रही चेतावनी को अभिव्यक्ति देता है।

यदि दुनिया ने कभी भी नाभिकीय युद्ध होने दिया तो किसी भी दूर-दराज़ के कोने में रहने वाले व्यक्ति सहित सम्पूर्ण मानवता को 'नाभिकीय शीत' की चपेट में आना होगा।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सामान्य परिस्थितियों में सूर्य की गर्मी को पृथ्वी की सतह और समुद्र द्वारा सोख लिया जाता है। इसका कुछ भाग पर्यावरण में रह जाता है, जो वर्ष के समय और भौगोलिक स्थिति के अनुसार अलग-अलग हिस्सों में अलग-अलग गर्म होता है। गर्मी का यही अन्तर पर्यावरण और समुद्र के बीच के सम्बन्धों का निर्धारण करता है, जिससे मौसम बनता है। पर्यावरण और मनुष्य दोनों ने इसके अनुरूप अपने को ढाल लिया है। प्राकृतिक या मानव निर्मित प्रभाव मौसम पर बहुत धीरे-धीरे कई दशकों या उससे भी अधिक समय में पड़ते हैं।

विश्वव्यापी नाभिकीय संघर्ष सहित किसी भी ऐसे विश्वव्यापी विनाश का अध्ययन करने के लिए सबसे बुरे सम्भव विकल्प के विश्लेषण की ज़रूरत होती है। इसमें भी कम-से-कम सम्भावना वाले क्षेत्रीय और विश्वव्यापी परिणामों और उसके प्रभावों को शामिल करना होता है। (ऐसे में) पृथ्वी और पर्यावरण पर होने वाले मौसमी परिवर्तन, जिनसे विश्वव्यापी विनाश हो सके, प्राकृतिक और मौसम सम्बन्धी कारणों से होने वाले परिवर्तनों की तुलना में बहुत तेज़ी से होंगे।

यदि वर्तमान नाभिकीय हथियारों के जखीरे का केवल दस या बीस प्रतिशत ही इस्तेमाल कर दिया जाए तो वह दस लाख वर्ग किलोमीटर जैसे बड़े क्षेत्र में जंगल जैसी आग भड़का देगा। इसके अलावा यह आग पूरे शहर, औद्योगिक केन्द्रों, गैस और तेल के क्षेत्रों को अपनी चपेट में ले लेंगी। नाभिकीय विस्फोटों से भारी मात्रा में धूल और अन्य छोटे-छोटे कण वायुमंडल में मिला देगी। धुआँ, धूल और अन्य कूड़ा वायुमंडल में मिलकर उसे इतना गंदा बना देगा कि पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाली सूर्य की किरणों की तीव्रता कई गुनी कम हो जाएगी। इससे पृथ्वी पर 'नाभिकीय रात्रि' हो जाएगी। इस बारे में सबसे पहले चर्चा पश्चिमी जर्मनी के मैक्स प्लैंक रसायन संस्थान के पाल क्रूज़न और अमरीका के कोलोरेडो विश्व विद्यालय के जान बिकर्स ने अपने लेख 'नाभिकीय युद्ध के बाद वायुमंडल : दुपहरी में

तारे चमके' में की गयी थी। अमरीकी वन सेवा द्वारा उपलब्ध बताये गये आँकड़ों के आधार पर इन वैज्ञानिकों की राय थी कि दस लाख वर्ग किलोमीटर के वन में फैली आग से पर्यावरण में 20 करोड़ टन धुआँ और कचरा फैल जाएगा। यह धुआँ और कचरा पूरे उत्तरी गोलार्ध पर एक ऐसी पर्त बना सकता है, जिससे सूर्य की रोशनी की तीव्रता में कई अंकों तक की कमी हो सकती है।

दावानल के साथ-साथ शहरों और तेल तथा गैस के क्षेत्रों में फैली आग 'नाभिकीय रात्रि' को बनाने में यदि अधिक नहीं तो बराबर की मदद कर सकती है। बड़े शहरों में यदि एकत्रित किये गये ज्वलनशील पदार्थों का अनुमान लगाया जाए तो यह प्रति वर्ग किलोमीटर सैकड़ों किलोग्राम बैठता है। उदाहरण के लिए, द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हम्बर्ग में 27-28 जुलाई, 1943 को लगी आग में जला हुआ ईंधन 300 किलोग्राम प्रति वर्गमीटर के अनुपात तक पहुँच गया था। बड़े शहरों में लगी आग जंगल की आग की तुलना में दुगुना धुआँ और कचरा वायुमंडल में मिला सकती है। इसके अलावा यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि जंगल में लगी आग से निकले धुएँ की तुलना में तेल, और तेल से बनने वाले पोलीमर्स और इसी प्रकार के अन्य पदार्थ कहीं अधिक मात्रा में सूर्य की गर्मी सोखते हैं।

अपने पहले के अध्ययनों के परिणामों के आधार पर सोवियत और अमरीकी मौसम विज्ञानी इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि 'नाभिकीय रात्रि' या पृथ्वी की सतह पर सूर्य की गर्मी की तीव्रता में अचानक तेज़ी से आई गिरावट पूरी ग्रह के मौसम में बहुत अन्तर लाएगी। 'नाभिकीय रात्रि' का मौसम पर मुख्य प्रभाव यह पड़ेगा कि 'नाभिकीय शीत' की शुरुआत हो जाएगी, अर्थात पृथ्वी का गोला बहुत तेज़ी से ठंडा होने लगेगा। 'नाभिकीय रात्रि' के परिणामस्वरूप 'नाभिकीय शीत' का आना अवश्यंभावी है, इसकी पुष्टि 1983 में तब हुई जब इन मामलों के गणितीय नमूने बनाये गये। इस प्रकार का पहला मॉडल अमरीकी वैज्ञानिकों के एक गुट द्वारा तैयार किये गये एक पर्चे से सामने आया। उन वैज्ञानिकों ने 'नाभिकीय शीत' की दशा में पृथ्वी के गोले के बहुत तेज़ी से ठंडे होने की सम्भावनाओं के लिए एक और मॉडल को आधार बनाया। यह मॉडल साढ़े छः करोड़ वर्ष पूर्व पृथ्वी पर एक उल्कापात के कारण हुए मौसमी परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए बनाया गया था। इन वैज्ञानिकों के अनुमानों के अनुसार नाभिकीय युद्ध के कारण वायुमंडल की ऊपरी सतह पर धूल की मात्रा की अधिकता और निचली सतह पर धुएँ की अधिक मात्रा के कारण कुछ ही महीनों में पृथ्वी की सतह के तापमान में चालीस से पचास डिग्री की गिरावट आ सकती है।

उसी वर्ष के दौरान सोवियत अनुसंधानकर्ताओं ने भी 'नाभिकीय रात्रि' के बारे में अनेक अध्ययन किये। इन वैज्ञानिकों ने पर्यावरण के सामान्य प्रसार मॉडल

और नाभिकीय संघर्ष के पर्यावरण और मौसम को प्रभावित करने वाले भौतिक पहलुओं को अपने अध्ययनों में उपयोग किया। इन वैज्ञानिकों ने मंगलग्रह पर आने वाली आँधियों और 'नाभिकीय शीत' के तुलनात्मक अध्ययन किये। अमरीका में और व्यापक अध्ययन किये गये, जिनमें हाल ही में विकसित किये गये मौसम के आंकिक मॉडलों का उपयोग किया गया।

यद्यपि इन अध्ययन परियोजनाओं में विभिन्न मामलों में अन्तर हैं। इनके कुछ पर्यावरणीय प्रक्रियाओं के विश्लेषण के तरीक़ों में भी अन्तर है, लेकिन इन सवका एक मूल और सामान्य निष्कर्ष यह है कि नाभिकीय युद्ध के परिणामस्वरूप लगी आग से पृथ्वी की सतह के विभिन्न हिस्सों में 20 से 25 डिग्री तक तापमान में गिरावट होगी।

'नाभकीय रात्रि' से 'नाभिकीय शीत' के बीच संचरण की प्रक्रिया इस प्रकार से होगी। सूर्य पृथ्वी और समुद्र को गर्म करता है, जिससे वायुमंडल में गर्मी होती है। सूर्य की गर्मी पृथ्वी के वायुमंडल को भेदकर पृथ्वी विकिरण द्वारा खर्च की गयी ऊष्मा की तुलना में कहीं अधिक गर्मी देती है। इसका परिणाम यह होता है कि पृथ्वी उस स्थिति, जबकि वायुमंडल समान मात्रा में सौर ऊर्जा और पृथ्वी की ऊष्मा को विकिरण द्वारा निकल जाने देता, की तुलना में आम तौर पर तीस डिग्री अधिक गर्म रहती है। ताप में यही तीस डिग्री का अन्तर पृथ्वी के वायुमंडल को कथित तापगृह प्रभाव को निर्माण करता है। यदि वायुमंडल में भारी मात्रा में ऐसे कण उपस्थित हों, जो सूर्य की रोशनी को सोख और पुनर्प्रसारित करने लगे तो पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाली सौर ऊर्जा की मात्रा में बहुत बड़ी कमी आएगी। वायुमंडल में उपस्थित ऐसे पदार्थों को एरोसोल्स कहते हैं।

धुएँ, कचरे और खास करके शहरों में लगी आग से उत्पन्न कणों में धूल की तुलना में सौर ऊर्जा को सोख लेने की अधिक क्षमता होती है और वे उसे पृथ्वी की सतह पर पहुँचने के मार्ग में ज्यादा रुकावट डाल सकते हैं। जंगल और शहर में लगी हुई आग ऐसी स्थिति उत्पन्न कर सकती है, जबकि सम्पूर्ण सौर ऊर्जा को वायु-मंडल पूरी तरह सोख ले। लेकिन फिर भी पृथ्वी की सतह लगातार गर्म होती रहे। पृथ्वी की सतह को यह गर्मी सूर्य की रोशनी से नहीं, वल्कि वायुमंडल से होने वाले तापीय विकिरण से मिल रही हो।

वायुमंडल में धुएँ की मात्रा में अचानक भारी वृद्धि ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देगी जवकि वायुमंडल सूरज की रोशनी पूरी तरह सोख ले। और सूरज की रोशनी पृथ्वी तक नहीं पहुँच सके, जिससे पृथ्वी की सतह ठंडी होनी शुरू हो जाए। उपर वर्णित सोवियत और अमरीकी वैज्ञानिकों द्वारा किये गये अनुसंधानों से इसकी पुष्टि हुई है। पृथ्वी की सतह की ठंडी होने की शुरुआत धीरे-धीरे ताप के उस स्तर तक पहुँच सकती है जितना कि सूर्य की रोशनी को सोखने वाले एयरोसोल पर्तों का

तापमान हो। यह तापमान पृथ्वी के सामान्य तापमान से दर्जनों डिग्री नीचे होगा। इसका परिणाम यह होगा कि वायुमंडल की गर्मी बनाये रखने का प्रभाव समाप्त हो जायेगा और 'नाभिकीय शीत' की शुरुआत हो जाएगी। इसके बाद भी पृथ्वी की सतह का ठंडा होना जारी रहेगा, जबकि सूर्य की रोशनी से गर्म होता हुआ धुआँ और ऊँचा उठकर आग की शुरुआत हुए क्षेत्र से ऊपर उठकर और दूरदराज के हिस्सों में फैल जायेगा। क़रीब लगभग एक महीने के अन्दर ही धुएँ और धूल का एक विशाल बादल पूरे उत्तरी गोलार्द्ध पर फैल जाएगा और धीरे-धीरे दक्षिण गोलार्द्ध की ओर फैलने लगेगा।

'नाभिकीय शीत' के माहौल में शहरों और जंगलों में लगी आग बुझने के पहले हफ़्तों तक जलती रहेगी। लगभग एक महीने के अन्दर ही धुएँ के छोटे-छोटे कणों के घने बादल न केवल उत्तरी गोलार्द्ध बल्कि दक्षिणी गोलार्द्ध पर छा जाएँगे और पृथ्वी की सतह का तापमान जमाव के तापमान से भी बहुत नीचे तक पहुँच जाएगा।

एक लम्बी काली सर्दी की रात पृथ्वी पर छा जाएगी और मानवता के सामने अपना अस्तित्व बनाये रखने का कोई भी मौक़ा नहीं होगा। यदि थोड़े से लोग जीवित बचे रह भी गए तो वे अपने-आपको ऐसी परिस्थितियों में पाएँगे, जिनमें पुराने से भी पुराने समय जीवित रहने वालों को जी पाना कठिन होगा।

वास्तविक या वैज्ञानिक गल्प

'नाभिकीय-शीत' के बारे में होने वाली चर्चा के दौरान कई बार अनेक ऐसे सवाल पूछे जाते हैं कि क्या यह केवल सैद्धांतिक संभावना ही तो नहीं है? क्या पृथ्वी पर होने वाले प्राकृतिक कारण, चाहे वह आंशिक रूप में ही क्यों न करते हों क्या वैज्ञानिकों के इन धारणाओं की पुष्टि करते हैं? मंगल-ग्रह पर उठने वाले धूल के झक्खड़ एक वास्तविक और एक ग्रह के बारे में पूरी तरह से अध्ययन किया हुआ उदाहरण पेश करता है। इन धूल के झक्खड़ों के परिणाम वैसे ही हो सकते हैं जैसे कि नाभिकीय युद्ध के हों, क्योंकि इनसे भी मंगल की सतह के ताप में उल्लेखनीय गिरावट आती है, जबकि उसके वायुमंडल का तापमान बढ़ता है। मंगल-ग्रह के इन धूल के झक्खड़ों का अध्ययन तभी किया जा सकता है जबकि यह पृथ्वी और सूर्य दोनों के बहुत नज़दीक हो। इन प्रभावों का पहली बार खगोलशास्त्रियों ने अध्ययन 19वीं शताब्दी के अन्त में किया। इस अवधि में मंगल-ग्रह ने क़रीब 20 प्रतिशत

अधिक सौर ऊर्जा ग्रहण की। और मंगल के दक्षिण गोलार्द्ध में वसन्त के अन्त और गर्मी के शुरू में उपमध्यीय क्षेत्र और बीच के देशांतरों पर मुख्यतः धुएँ के बादल बने। इसके ढलते ही रोजाना इन बादलों की मात्रा बढ़ती गयी। यद्यपि दिन निकलने पर धूल मंगल-ग्रह की सतह पर बैठ जाती लेकिन वायुमंडल में औसत धूल की मात्रा का हिस्सा लगातार बढ़ता गया। क़रीब दो सप्ताहों के अन्दर पूरे ग्रह पर धूल की चादर फैल गयी। फिर इस ग्रह का धूल से सने वायुमंडल ने ज्यादा-से ज्यादा सूर्य की गर्मी को सोखना शुरू कर दिया। और यह 20 से 30 डिग्री तक अधिक गर्म हो गया और यह गर्मी बढ़ती गयी, जबकि धूल के गुबार के नीचे छिपी सतह ने ठंडा होना शुरू कर दिया और वह अपने सामान्य तापमान से 10 से 15 डिग्री तक अधिक ठंडी हो गयी। धूल की यह पर्त न केवल वायुमंडल के गर्मी को समाप्त होने से रोकने के प्रभाव को समाप्त करती है बल्कि यह इसके विपरीत काम करती है अर्थात् वायुमंडल की तुलना में सतह का तापमान कम होने लगता है।

हालाँकि मानवता के उदय के बाद से कभी हमारे ग्रह को विश्वव्यापी और अचानक वायुमंडल के एयरोसोल प्रदूषण का वैसा सामना करना पड़ा हो जैसा कि मंगल-ग्रह पर नियमित रूप में होता हो, लेकिन यह सम्भव है कि पृथ्वी की सतह पर उल्कापात के कारण वायुमंडल में भारी मात्रा में धूल उड़े, जिससे कि 'उल्का-रात्रि' की शुरुआत हो, जो बाद में 'उल्का-शीत' बने। बहुत से वैज्ञानिकों की राय है कि इतने बड़े पैमाने पर मौसम में होने वाली घटना से अनेक क़िस्म के पशु विलुप्त हो जाएँगे। उपलब्ध वैज्ञानिक आँकड़ों के विश्लेषण से इस बात की पुष्टि होती है कि भू-वैज्ञानिकी की दृष्टि से इस थोड़े से समय में 25 किलो से अधिक भार वाले विभिन्न क़िस्म के जन्तु पृथ्वी की सतह से विलुप्त हो गये हों।

ज्वालामुखी के फटने को केवल उसकी विध्वंसक क्षमता के लिए ही नहीं जाना जाता बल्कि उसके बाद प्राकृतिक पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों और उसके परिणामों पर वैज्ञानिकों ने गहराई से विचार किया है। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में ज्वालामुखी फटने के मौसम पर पड़े प्रभावों का अध्ययन किया गया है। उदाहरण के लिए, 1815 में इंडोनेशिया में तम्बोरा ज्वालामुखी के फटने से 150 घन किलो मीटर धूल निकली, जो बहुत बड़े क्षेत्र में फैल गयी। ज्वालामुखी के फटने का अगला वर्ष यानी 1916 को उत्तरी अमरीका और पश्चिमी यूरोप के लिए एक ऐसा वर्ष हुआ जिसमें गर्मी पड़ी ही नहीं। न्यू इंग्लैंड में जून में भी बर्फ़ पड़ती रही और जुलाई और अगस्त में भी तापमान जमाव बिन्दु के नीचे बना रहा। स्विट्ज़रलैंड और फ्रांस में उस वर्ष अंगूर पकने का मौसम सबसे देरी से आया। 1782 और 1856 के बीच इतनी देर होने का यह एक रिकार्ड था। उस वर्ष उत्तरी अमरीका इंग्लैंड और स्विट्ज़रलैंड में गर्मियाँ सबसे ज्यादा ठंडी रहीं। यह भी माना जा सकता है कि तम्बोरा ज्वालामुखी का फटना अपने साथ कॉलरा की महामारी लाया।

सर्वाधिक ठंडा वर्ष 1816 अकाल पड़ने और फसल नहीं होने के कारण बंगाल से हैज़े की शुरुआत हुई। यह महामारी 1823 में कॉकेशस पहुँची और 1830-32 में यह यूरोप और उत्तरी अमरीका में फैली। यदि एक ज्वालामुखी का फटना गर्मी के कुछ महीनों में तापमान को अनेक डिग्री तक नीचे गिरा देता है तो नाभिकीय शीत के दौरान पृथ्वी की पूरी सतह पर दहाई के अंकों में ताप में गिरावट के विनाशकारी परिणामों का अनुमान लगा पाना भी कठिन होगा। 'विना ग्रीष्म के वर्ष' का विवरण समाप्त करने के पूर्व हम लार्ड वायरन द्वारा 1816 में लिखी गयी एक कविता 'अंधकार' का एक हिस्सा उद्धृत करना चाहेंगे। यह कविता जिनेवा झील के तट पर एक वहुत ठंडे और वरसाती मौसम में लिखी गयी थी :

"मैंने एक सपना देखा, जो केवल एक सपना ही नहीं था।
चमकता हुआ सूर्य बुझ गया और
सम्पूर्ण अंतरिक्ष में बुझते हुए तारों ने अनोखा
खेल शुरू किया।
किरणहीन और राहहीन शीतल पृथ्वी दृष्टिहीनों
की तरह भटकती रही चाँदनी बिना हवा में कालिमा छा गई।
सुवह आयी और गयी, गयी और आयी लेकिन साथ में दिन न लायी
दमघोटू माहौल में हवाएँ थम गयीं,
वादल थम गये उनकी ज़रूरत न थी कालिमा को
यह ब्रह्माण्ड था!"

1950 के गर्मियों में कनाडा के अलवर्टा प्रांत में, जंगल में लगी प्रचंड आग का अध्ययन एक और उदाहरण है। इस आग से धुएँ का एक वहुत विशाल बादल उठा था। हवा में कई किलोमीटर तक ऊपर उठने के बाद यह बादल पूर्व की ओर खिसकने लगा। इससे अमरीकी क्षेत्र में दिन के तापमान में कई डिग्री की गिरावट आयी। इसके बाद इसने हिंद महासागर को पार किया। यह बादल 8 से 10 किलोमीटर की ऊँचाई पर पश्चिमी यूरोप पर देखा गया। यह उदाहरण इस कथन को व्यापक रूप से स्पष्ट करता है कि वायुमंडल में होने वाली कुछ प्रक्रियाएँ धुएँ के बादल को वायुमंडल के ऊपरी पर्तों तक उठा सकती है और उसे वहुत दूरी तक ले जा सकती है।

यह वहुत पहले सिद्ध किया जा चुका है कि बड़े पैमाने पर लगी आग केवल उसी क्षेत्र के लिए प्राकृतिक आपदा नहीं है, जहाँ कि वास्तव में लपटों से आग फैली हो बल्कि यह वहुत बड़े क्षेत्र के लिए आपदा बन सकती है, जहाँ तक इस आग से निकले धुएँ के बादल फैलें। प्राचीन रूसी पांडुलिपियों में 1371 में जंगलों में लगी आग का उल्लेख है, जिनसे उठा घना धुआँ दो महीने तक वायुमंडल में छाया रहा और इस दौरान लोग अपनी आँखों से सूर्य के काले धब्बों को देखने में सफल हुए।

इससे जंगल का और भी बड़ा क्षेत्र तथा अन्य सूखी हुई चीज़ों ने आग पकड़ ली। जंगली जानवरों ने आदमियों से डरना छोड़ दिया और वे गाँवों में घूमते रहे, पक्षियों को दिशा ज्ञान नहीं रहा और वे पृथ्वी पर गिर पड़े।

30 जून, 1908 को तुंगुस्का उल्का विस्फोट से जंगलों में भयानक आग लगी, जो पाँच दिनों तक जलती रही। यह उल्का विस्फोट साइवेरियाई ताइगा के आठ किलोमीटर की उँचाई पर हुआ। इस विस्फोट ने 10 एम० टी० के नाभिकीय बम के विस्फोट के बराबर का प्रभाव उत्पन्न किया।

यदि आम तौर पर देखा जाए तुंगुस्का उल्कापात के प्रभावों को एक शक्तिशाली नाभिकीय विस्फोट से तुलना की जा सकती है। वायुमंडल से गुज़रते हुए इस उल्का ने हवा को इतना गर्म कर दिया कि नाइट्रिक एसिड बन सकता है। कुछ अनुमानों के अनुसार इस प्रकार जितनी मात्रा में आक्साइड बना वह छह हज़ार एम० टी० क्षमता के नाभिकीय बम के विस्फोट से बना। इस विस्फोट से वायुमंडल में धूल की मात्रा बढ़ी और नाइट्रोजन का प्रतिशत गिर गया।

1915 में साइवेरिया के जंगल में लगी आग ने एक लाख बीस हज़ार वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र जलाकर खाक कर दिया। घने धुएँ के कारण फ़सलों के पकने में दो सप्ताह की देरी हुई, जिससे कि अनाज के दाने छोटे रह गये। पचास दिनों तक यूरोप के बराबर के क्षेत्र पर धुआँ छाया रहा। कुछ क्षेत्रों में तो धुआँ इतना घना था कि कुछ क़दम से अधिक देख पाना संभव नहीं था।

1972 में सोवियत संघ के यूरोपीय हिस्सों के मध्य क्षेत्र में पड़े भीषण सूखे के कारण अनेक स्थानों पर आग लगी। इससे उठा हुआ धुआँ हवा में पाँच किलोमीटर ऊपर तक की ऊँचाई तक चढ़ गया था। 5600 किलोमीटर लम्बा और एक सौ से चार सौ किलोमीटर चौड़े फ़ीते जैसा दिखने वाला धुएँ का बादल रूस के मैदानों से लगाकर क़रीब-क़रीब मध्य एशिया तक छाया रहा। आग लगने के महीनों बाद तक वायुमंडल में दूर तक देख पाना सम्भव नहीं हो सका।

विश्वव्यापी 'नाभिकीय रात्रि' और 'नाभिकीय शीत' की धारणाओं के भौतिक पहलुओं के बारे में 1983 में जानकारी प्राप्त हुई। इसके बाद 'नाभिकीय शीत' के आर्थिक और पर्यावरणीय परिणामों के अध्ययन की ओर ध्यान केन्द्रित किया गया। इसके अलावा बहुत से नाभिकीय विस्फोटों से वायुमंडल और पृथ्वी की सतह पर होने वाली भौतिक प्रक्रियाओं के गहराई से अध्ययन करने की कोशिश की गयी। 'नाभिकीय-शीत' के परिस्थिति वैज्ञानिक और आर्थिक परिणामों के बारे में सोवियत संघ के नाभिकीय खतरे के विरुद्ध शांति के लिए कार्यरत वैज्ञानिकों ने अध्ययन किया। इस अध्ययन के परिणामों को 'नाभिकीय युद्ध के विश्वव्यापी प्रभाव और विकासशील देश' नाम की रिपोर्ट में प्रकाशित किया गया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि यद्यपि वर्तमान विज्ञान 'नाभिकीय शीत' और नाभिकीय युद्ध के

परिस्थिति वैज्ञानिक और भूमध्य सागरीय देशों की अर्थव्यवस्था के खतरनाक परिणामों का विस्तृत अनुमान लगाने में सक्षम नहीं है। लेकिन एकत्रित की गयी जानकारियों से यह चेतावनी देने के लिए पर्याप्त प्रमाण है कि ऐसा होने पर अफ्रीका और एशिया तथा लातीनी अमरीका के उष्णकटिबंधीय क्षेत्र देशों की खेती पूरी तरह समाप्त हो जाएगी। इस क्षेत्र की फ़सल नाभिकीय शीत की ठंड और अँधेरे से पूरी तरह तबाह हो जाएगी और उसको फिर से उत्पन्न कर पाना असम्भव होगा। इस क्षेत्र के जंगलात आक्सीजन के लिए एक मूल स्रोत और पृथ्वी पर जीवन के आधार, अस्थायी अँधेरे या जमाव बिन्दु के निकट के तापमान से समाप्त हो जाएँगे क्योंकि ये केवल बहुत थोड़े से तापमान के अंतर में ही जीवित रह पाने के योग्य हैं, और ये तापमान या रोशनी में बहुत ज्यादा उतार-चढ़ाव झेल पाने के योग्य नहीं हैं। नाभिकीय युद्ध विकासशील देशों की जनसंख्या के जीवन को नरक के समान बना देगा। जमाव बिन्दु के नीचे का तापमान भूख और बीमारियाँ, अन्ततोगत्वा पृथ्वी पर से जीवन को समाप्त कर देंगे।

नाभिकीय शीत के पैरोकार और विरोधी

जैसे-जैसे नाभिकीय युद्ध के भौतिक और मौसम विज्ञान पर पड़ने वाले प्रभावों के सिद्धांत का आगे विकास हो रहा है, इस क्षेत्र में अध्ययन करने वाले लगभग सभी वैज्ञानिक इस बात से पूर्ण सहमत होते जा रहे हैं कि वायुमंडल में समान रूप से फैला हुआ धुआँ और कचरा पृथ्वी की सतह के तापमान को अचानक बहुत नीचे गिरा सकता है। सबसे ज्यादा विवाद बड़े पैमाने पर आग लगने, बड़े पैमाने पर धुएँ के फैलने और वायुमंडल से एयरोसोल कणों के समाप्त हो जाने के सिद्धांतों को लेकर चल रहा है। यह पूरी तरह स्पष्ट है कि उक्त सभी प्रक्रियाओं का वास्तविक जीवन में प्रयोग करके अध्ययन नहीं किया जा सकता। दूसरी ओर सैद्धांतिक अध्ययनों और गणितीय मॉडलों द्वारा उक्त प्रक्रियाओं का अध्ययन करने के लिए विभिन्न अनुसंधान संस्थाओं द्वारा बहुत बड़े पैमाने पर कार्य करना ज़रूरी है। इस सबके बावजूद वायुमंडल में और पृथ्वी की सतह पर होने वाली भौतिक प्रक्रियाओं के बारे में इस समय उपलब्ध जानकारियों से इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि इस प्रकार की घटनाएँ हो सकती हैं, जिनसे कि नाभिकीय शीत की शुरुआत हो जाए।

सोवियत संघ, अमरीका अन्य देशों के वैज्ञानिकों ने विश्व निरस्त्रीकरण अभियान के तहत होने वाली बैठकों, संगोष्ठियों और सम्मेलनों तथा विभिन्न अन्तर्रा-

ष्ट्रीय अनुसंधान परियोजनाओं के तहत द्विपक्षीय या वहुपक्षीय संपर्कों में नाभिकीय युद्ध ने दुनिया के मौसम तथा परिस्थिति विज्ञान एवं वहुत से नाभिकीय विस्फोटों के स्थानीय और क्षेत्रीय प्रभावों के वारे में जानकारियों का आदान-प्रदान किया है, उदाहरण के लिए, वैज्ञानिक यूनियनों की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद के एक सहायक संगठन—पर्यावरण की समस्याओं के वारे में वैज्ञानिक समिति ने 'नाभिकीय युद्ध के पयावरणीय प्रभाव' नाम सेएक परियोजना चलायी थी। इस कार्यक्रम का उद्देश्य एक ऐसी निष्पक्ष और सक्षम रिपोर्ट तैयार करने के लिए आधार वनाना है, जिसमें नाभिकीय युद्ध के मानवता और सम्पूर्ण जीव मात्र पर पड़ने वाले सम्भावित परिणामों का विस्तृत ब्योरा हो।

1984 में लेनिनग्राद में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ। इसका मुख्य विषय था 'नाभिकीय युद्ध के मौसम पर पड़ने वाले प्रभाव और उसका जीवमात्र पर प्रभाव।' इस सम्मेलन में सोवियत यूनियन, अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, जापान, डेनमार्क, स्वीडन और स्पेन के क़रीव 50 वैज्ञानिकों ने हिस्सा लिया। ये वैज्ञानिक इस वात पर एकमत थे कि यदि नाभिकीय संघर्ष हुआ तो मानवता और सभी जीवित वस्तुओं को, 'नाभिकीय-शीत' का सामना करना पड़ेगा जो नाभिकीय युद्ध में वच भी गये लोगों के लिए घातक होगी।

'विश्व निशस्त्रीकरण अभियान' के तहत जून 1984 में लेनिनग्राद में संयुक्त राष्ट्र क्षेत्रीय सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में सोवियत और अमरीकी भौतिकशास्त्रियों और चिकित्सकों ने नाभिकीय युद्ध के पर्यावरण मौसम जीव वैज्ञानिक और चिकित्सा क्षेत्र में पड़ने वाले विनाशकारी प्रभावों के वारे में चेतावनी जारी की।

यहाँ यह भी उल्लेख किया जा सकता है कि नाभिकीय युद्ध के विश्वव्यापी परिणामों के वारे में अमरीकी वैज्ञानिकों में मतभेद हैं। कुछ वैज्ञानिकों की राय है कि जल्दी में किसी परिणाम पर पहुँचने की ज़रूरत नहीं है, जवकि कुछ अन्य वैज्ञानिकों का विश्वास है कि यदि नाभिकीय युद्ध भड़कने दिया गया तो मानवता के वचे रहने की सम्भावना के वारे में सन्देह के पर्याप्त कारण हैं। ऐसे भी लोग हैं जो अमरीकी सत्तारूढ़ क्षेत्रों के आक्रामक रुख रखने वालों के समर्थक हैं और वे नाभिकीय युद्ध के विनाशकारी परिणामों को कम करके वताने का हर सम्भव प्रयास कर रहे हैं।

उदाहरण के लिए 'नेचर' नाम की पत्रिका के अगस्त '84 के अंक में एडवर्ड टेलर का एक लेख प्रकाशित किया। हाइड्रोजन वम के जनक कहे जाने वाले टेलर ने 'नाभिकीय युद्ध के दूरगामी प्रभाव' शीर्षक से प्रकाशित अपने लेख में लिखा कि "नाभिकीय विस्फोटों से होने वाला रेडियो विकिरण और ओज़ोन की पर्त में कमी

को पहले विनाशकारी माना जाता था, लेकिन अब ऐसा लगता है कि इन विस्फोटों

से होने वाली वास्तविक क्षति की तुलना में ये परिणाम नगण्य होंगे।" एडवर्ड टेलर ने विश्वास व्यक्त किया है कि नाभिकीय अग्नि से उत्पन्न होने वाले धुएँ के वारे में सही आँकड़ों के उपलब्ध नहीं होने और उस आधार पर किये जाने वाली मौसमी प्रक्रिया की सम्भावनाएँ 'नाभिकीय-शीत' के संभावित प्रभावों की विश्वसनीयता पर सन्देह उत्पन्न करती है।

अपनी राय के पक्ष में लेखक ने कुछ आँकड़े दिए हैं और कहा है कि वायुमंडल में कुछ ऐसी प्रक्रियाएँ हो सकती हैं, जिनसे धुएँ के हटने में तेज़ी आ जाए और पृथ्वी की सतह की ठंडी होने की गति धीमी हो जाए। अमरीकी और सोवियत वैज्ञानिकों के निष्कर्षों को रद्द करते हुए टेलर ने कहा है कि ये तर्क तसल्लीबख़्श नहीं हैं। लेकिन टेलर के ज़्यादतर तर्क ख़ुद ही तसल्लीबख़्श नहीं लगते, क्योंकि धुएँ को वातावरण से हटाने की गति को तेज़ करने वाली प्रक्रियाओं के साथ ही अन्य ऐसी प्रक्रियाएँ हैं, जो कणों को समानान्तर और लम्बवत फैलाने में योगदान करती हैं। यही वे प्रक्रियाएँ हैं जो वातावरण में धुएँ और कचरे की मात्रा के वढ़ने पर वास्तव में जिनकी तीव्रता तेज़ी से वढ़ती है।

यह लेख ठीक उस समय प्रकाशित हुआ, जब 21-28 अगस्त, '84 तक तालीनन में नवीं अन्तर्राष्ट्रीय वादल भौतिकी के वारे में आयोजित कांग्रेस चल रही थी। सोवियत और अमरीकी वैज्ञानिकों द्वारा इस कांग्रेस में पढ़े गये अनुसंधान पत्रों में टेलर के निर्णयों का खंडन किया गया था।

विश्व का परिस्थिति वैज्ञानिक विनाश

यह सम्भव है कि नाभिकीय विस्फोटों के क्षेत्रों से दूर-दराज़ के इलाक़ों में रहने वाले लोगों को शुरू-शुरू में ये विस्फोट दिखाई या सुनाई नहीं दें। लेकिन उन्हें नाभिकीय युद्ध की शुरुआत होने की जानकारी कुछ संकेतों से मिलने लगेगी। उदाहरण के लिए उन क्षेत्रों से संचार सम्बन्ध टूट जाएँगे जहाँ वास्तव में विस्फोट हुए होंगे। विभिन्न प्रकार की विद्युत प्रणालियाँ मसलन भूमि और अंतरिक्ष में संचार साधन, विजली का वितरण करने वाली लाइनें कम्प्यूटर इत्यदि काम करना वन्द कर देंगे क्योंकि नाभिकीय विस्फोटों से उत्पन्न विद्युत चुम्वकीय किरणें इन पर बुत प्रभाव डालेंगी। कुछ देर वाद भूकम्प नापने वाली वेधशालाएँ इनकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगी। इसका अगला संकेत भारी मात्रा में चलने वाली तूफ़ानी हवाओं से मिलेगा। इसके वाद आकाश धीरे-धीरे काला होने लगेगा, क्योंकि वायुमंडल में

धुआँ, धूल और राख की मात्रा बढ़ने लगेगी। वायुमण्डल के गंदा होने से उसकी पारदर्शिता में तेज़ी से कमी आएगी। इससे सूर्य की किरणों की वायुमंडल को वेधने की क्षमता और प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया को बनाए रखने की क्षमता को बहुत तेज़ी से घटा देगी। यही क्षमता पृथ्वी के जीवन योग्य पर्यावरण का आधार है और जो हर वर्ष पृथ्वी के कुल 98 प्रतिशत से भी अधिक का उत्पादन करता है। जीवन को नष्ट करने में अँधेरा एक सबसे प्रमुख कारण बनेगा।

जैसाकि हम पहले भी उल्लेख कर चुके हैं कि ऊष्ण-कटिबन्धीय क्षेत्र के जंगलात तो थोड़े समय को भी 'नाभिकीय-शीत' को सहन नहीं कर पाएँगे। 'नाभिकीय-शीत' के कारण ही पृथ्वी के अधिकतर जानवर और पेड़-पौधे मर जाएँगे क्योंकि वायुमंडल में आक्सीजन की मात्रा पूरी तरह समाप्त हो जाएगी। यदि कुछ पेड़-पौधे या जानवर बच भी गए तो उनका जीवनचक्र बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो जाएगा।

निस्सन्देह, हमारे ग्रह का जीवन एकल ग्रहीय प्रक्रिया पर आधारित है, जिसमें पेड़-पौधे, जो कायांग पदार्थ के प्राथमिक उत्पादक हैं, सौर ऊर्जा, जीवाणुओं द्वारा कार्बनिक एसिड, पानी और खनिजों का अवशोषण करते हैं। पशुओं और उनका बहुल पुनर्क्रिया तथा जीवाणु अंगों द्वारा कार्बनिक पदार्थ को प्रारम्भिक चरण के खनिजों में बदलने की संक्रिया सम्मिलित है। इन प्रक्रियाओं के बीच विश्वव्यापी गत्यात्मक संतुलन न केवल लाखों वर्षों से जीवन का अस्तित्व ही बनाये हुए है, बल्कि इसी से पृथ्वी की सतह पर जल और वायुमंडल में होने वाली रासायनिक प्रक्रियाएँ होती हैं।

यहाँ तक कि शान्तिकाल में भी मनुष्य द्वारा की जाने वाली आर्थिक गतिविधियों से पर्यावरण पर दूरगामी प्रभाव पड़ते हैं, जिनसे वायुमंडल में गैसों की उपस्थित जल-स्रोत इत्यादि में परिवर्तन होता है। बड़े पैमाने पर होने वाले नाभिकीय संघर्ष के पर्यावरण में व्यापक परिवर्तन होंगे खास करके ऊष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों में जो 'असुरक्षित' माने जाते हैं।

विश्वव्यापी स्तर पर एक और महत्वपूर्ण प्रभाव वायुमंडल में ऐसे ज़हरीले पदार्थों का मिलना होगा जिनका लम्बे समय तक प्रभाव रहेगा। आग, विस्फोटों ईंधन के गोदामों की बर्बादी से हवा में भारी मात्रा में रेडियो धर्मी तत्व, कार्बन मोनो आक्साइड, साइनाइड डाइआक्सिन, और अन्य ज़हरीली गैसें मिल जाएँगी जो सभी जीवित जीवों और खास करके मनुष्य और अन्य उच्च क़िस्मों के जीवों पर बुरा प्रभाव डालेंगी।

लड़ाइ वाले क्षेत्रों में पहले ही कुछ दिनों लाखों की संख्या में लोग और बड़ी संख्या में जानवर मारे जाएँगे। इन लाशों के खुले में पड़े रहने से सड़ाँध और सड़न पैदा करने वाले जीवाणु बड़े पैमाने पर फैलेंगे। महामारियाँ और अन्य बीमारियाँ
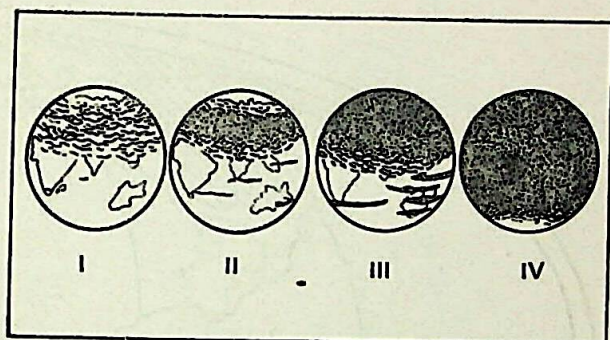
धुएँ और धूल का काला बादल
पृथ्वी को ढँक लेता है

(I) आरंभिक दिनों में

धुएँ और धूल के बादल बहुल
विस्फोटों और आग के स्थानों के
ऊपर

(II) पहले 10 दिनों में

उत्तरी गोलार्द्ध में मध्यम अक्षांश
घने बादल से ढँके हैं

(III) दूसरे से तीसरे सप्ताह में

सम्पूर्ण उत्तरी गोलार्द्ध को काला
आवरण ढँक लेता है और भूमध्य
रेखा को पार कर जाता है

(IV) पहले महीने में

लगभग सम्पूर्ण भूमण्डल धुएँ और
धूल के समान बादल से ढँक जाता है
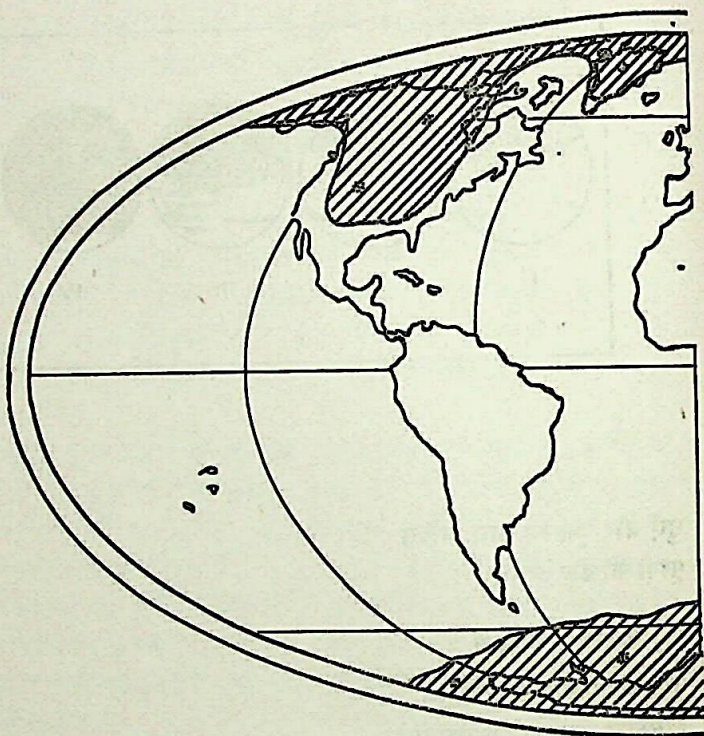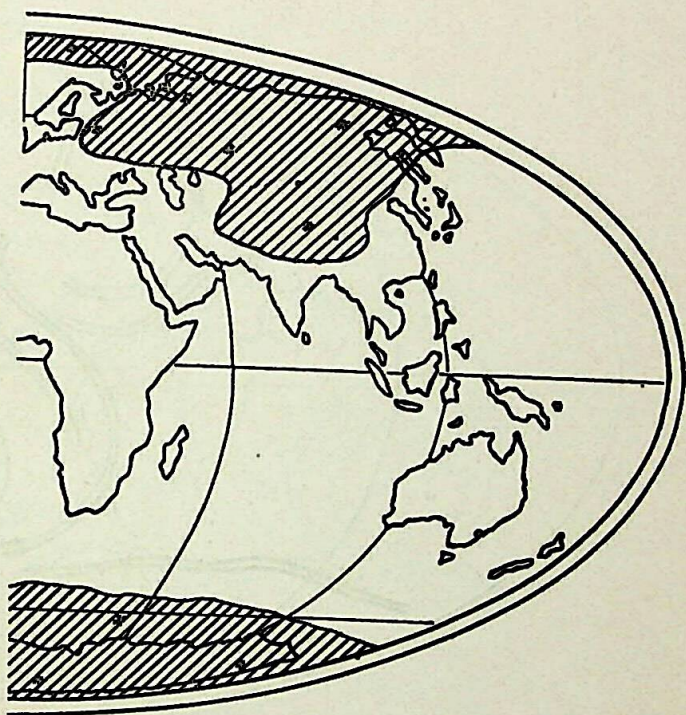
'नाभिकीय युद्ध के दसवें दिन' पाला गर्मी में भी 'नाभिकीय शीत' की लहर, जो सिर्फ दस दिन ही चले, तो भी उत्तरी गोलार्द्ध में विशाल क्षेत्रों को जमा दे सकती है।
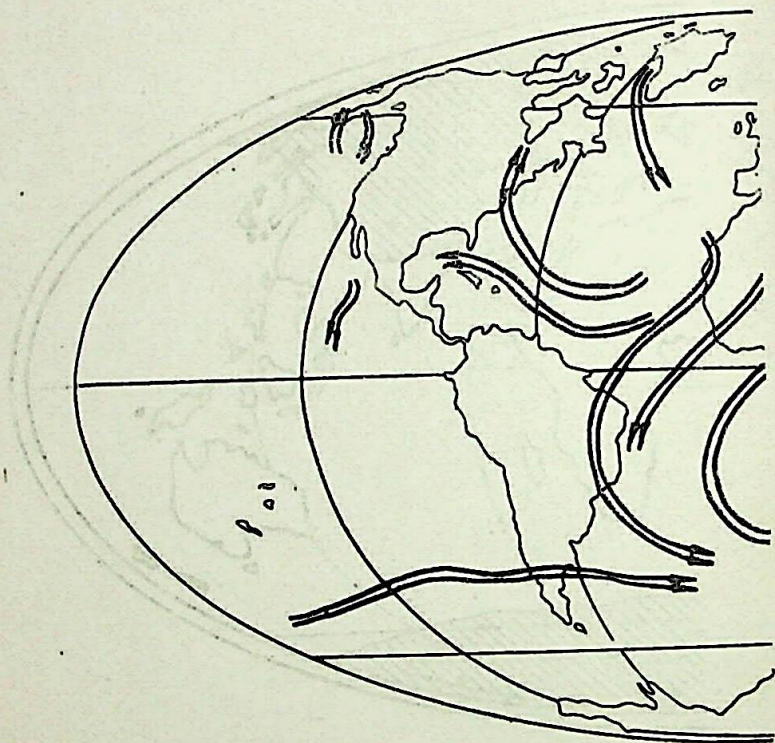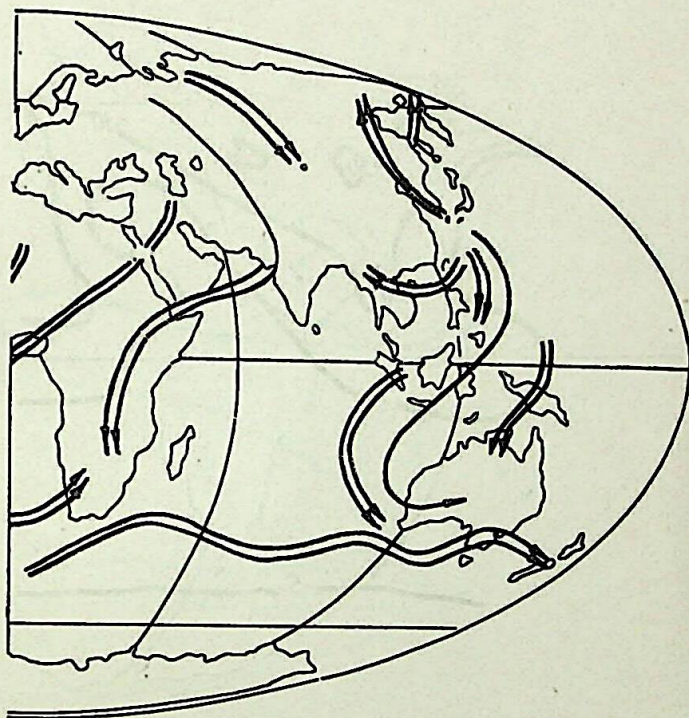
'20वें दिन' हवाएँ

'नाभिकीय शीत' की चपेट में आये और इससे बच रहे क्षेत्रों के तापमान में अन्तर से सम्पूर्ण ग्रह पर वायु-प्रवाह की दिशा में भारी परिवर्तन हो जायेगा। परिवर्तन से उत्पन्न पवन दक्षिणी गोलार्द्ध में धूल और धुआँ ले जायेगा।

-35
-10
-30
-30
-10
-5
-22
-5
-5
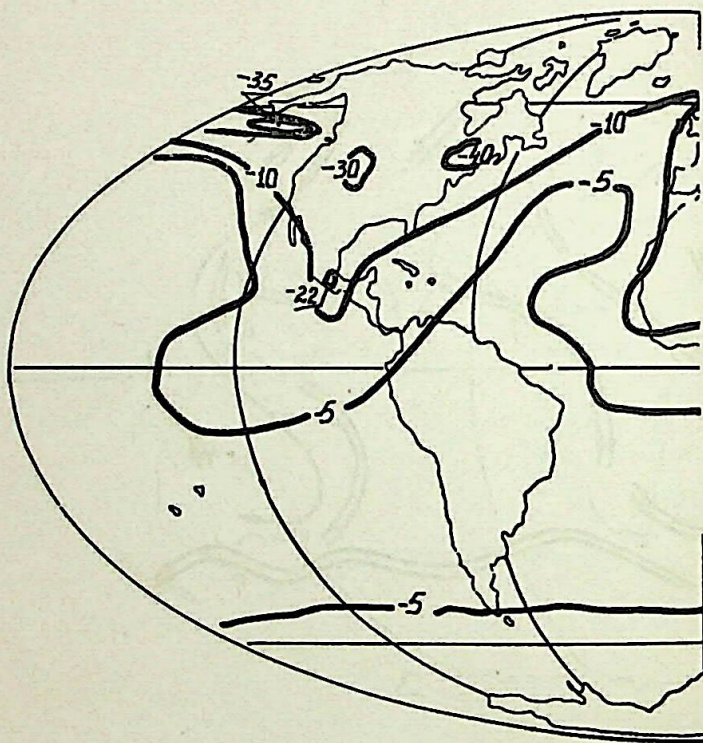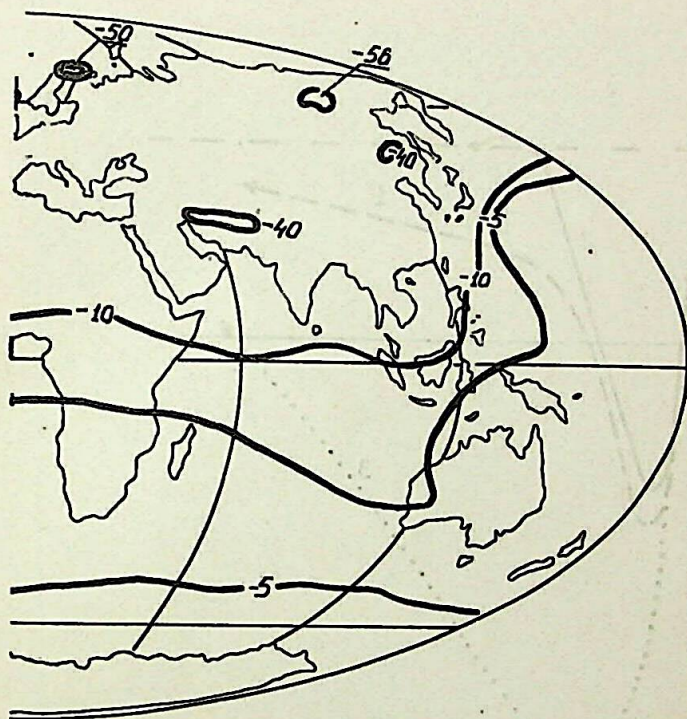
'40वें दिन' शीत में कमी। यूरोप और एशिया के तापमान 10° सेंटीग्रेड से कम नहीं गिरेगा। अधिकांश उष्ण-कटिबन्धीय क्षेत्रों में तापमान 5° सेंटीग्रेड गिरेगा और उत्तरी गोलार्द्ध के कुछ क्षेत्रों में तो तापमान 30° से 50° सेंटीग्रेड तक गिर जायेगा।
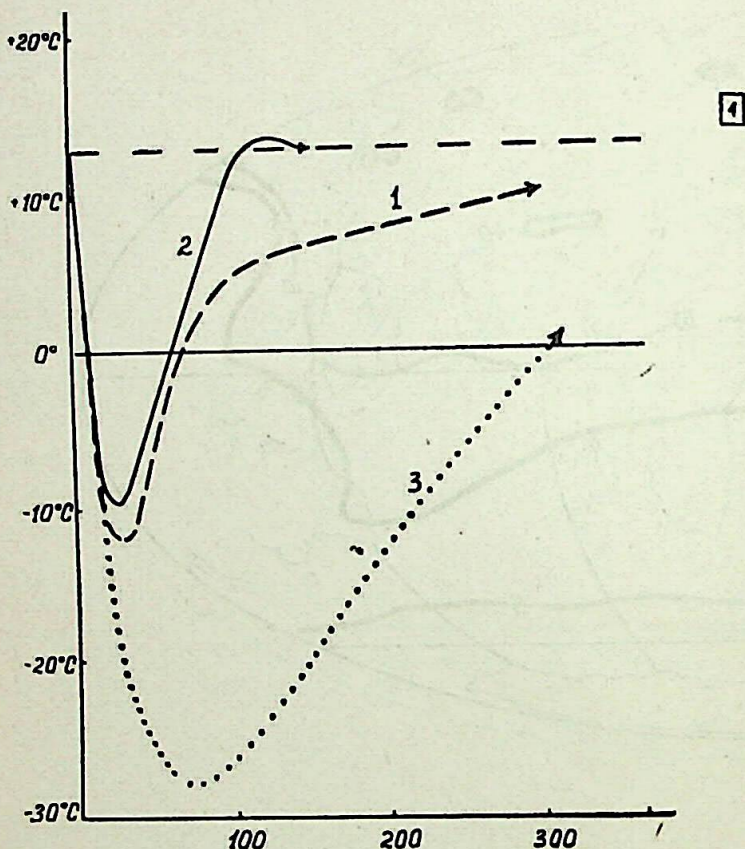
नाभिकीय युद्ध की स्थिति में भूखण्ड तल पर औसत तापमानों में परिवर्तन :

1—5000 मीट्रिक टन नाभिकीय शस्त्रों के प्रहार से पीड़ित क्षेत्र;

2—100 मीट्रिक टन नाभिकीय शस्त्रों के प्रहार से पीड़ित क्षेत्र;

बड़े शहरों पर विस्फोटित नाभिकीय शस्त्र;

3—1000 मीट्रिक टन के नाभिकीय शस्त्रों के प्रहार से पीड़ित क्षेत्र, जहाँ पर सर्वाधिक संख्या में आग प्रज्वलित होगी।
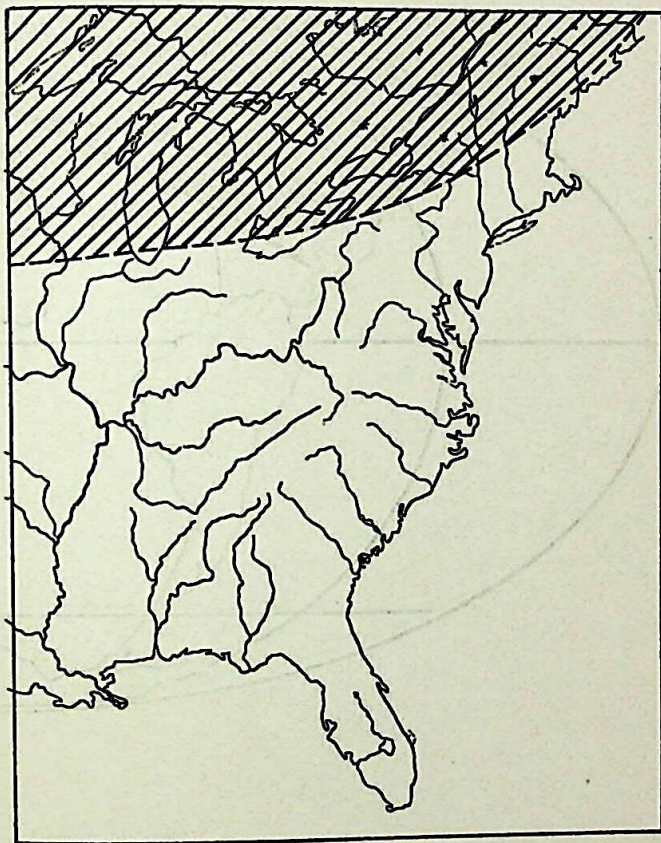
1815 में ताम्बोरा ज्वालामुखी में हुए विस्फोट के प्रभाव—उत्तरी अमरीका में हिमपात और तुषारपात।

1832
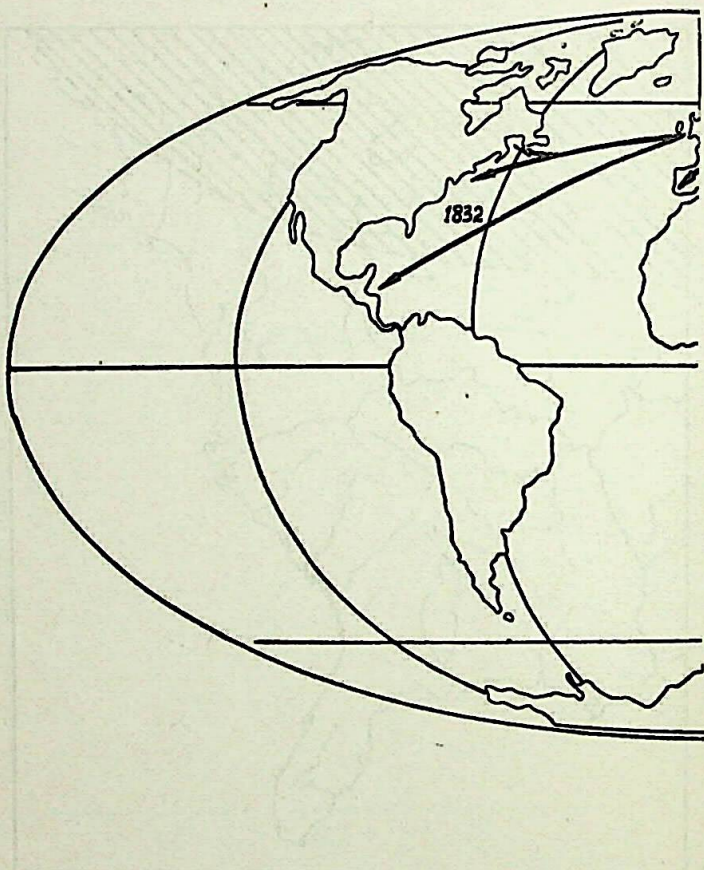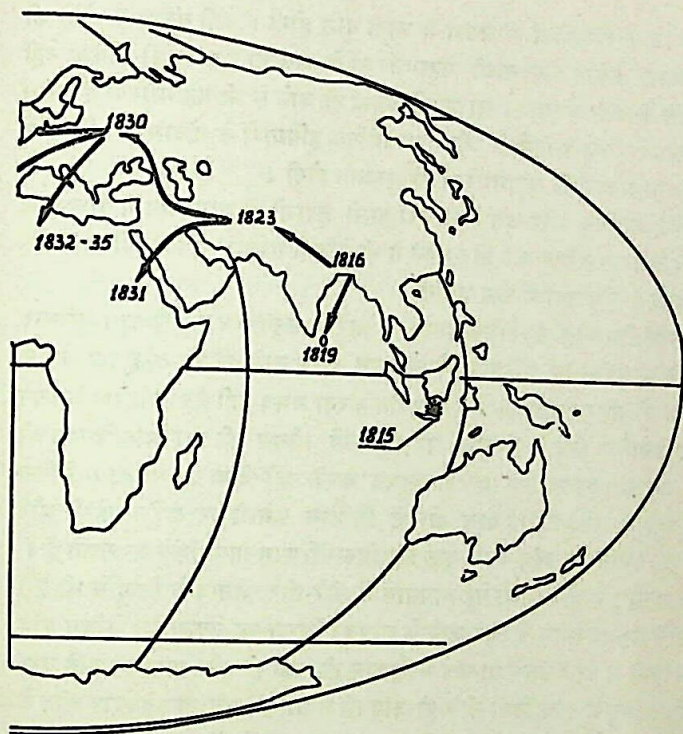
ताम्बोरा ज्वालामुखी के विस्फोटों के बाद 1816 में, भुखमरीग्रस्त बंगाल में हैज़े का प्रकोप।

फैलाने वाले कीड़े-मकोड़ों की संख्या में भारी वृद्धि होगी । बड़ी संख्या में लोगों की मौत के बाद उत्पन्न होने वाली महामारियों के अलावा इलाज की सुविधा नहीं होने, पीने के पानी की पाइप लाइनों के बर्बाद हो जाने से भी महामारियाँ फैलेंगी। इसके अलावा ज़हरीली गैसों और रासायनिक हथियारों के गोदामों में विस्फोट होने से अन्य प्रकार की महामारियों की शुरुआत होगी ।

धुआँ, कालिख और धूल के बादलों वाली हवाओं के वायुमंडल में पश्चिम से पूर्व और उत्तर से दक्षिण की ओर बहने से भी रेडियो सक्रिय, जैविक और रासायनिक गंदगी पूरी दुनिया में फैल जाएगी ।

'नाभिकीय शीत' के जैविक प्रभावों के बारे में अनुसंधान करना बहुत मुश्किल है क्योंकि वायुमंडलीय परिणामों के अध्ययन करने वाले की ही तरह इस क्षेत्र के वैज्ञानिक को भी व्यावहारिक रूप में प्रयोग करना संभव नहीं है। उदाहरण के लिए ऊष्ण-कटिबंधीय क्षेत्र के जंगलात पर बहुत ठंडे मौसम की क्या प्रतिक्रिया होगी इसका अनुमान व्यवहारिक रूप से अनुभव करके नहीं देखा जा सकता। लेकिन ताहम यहाँ अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्र में विभिन्न फ़सलों पर प्रयोग करके और मौसम की प्रभाव की जाँच करके कुछ प्राथमिक परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

शीत ऋतु में होने वाला गेहूँ तापमान में धीरे-धीरे जमाव के बिन्दु से भी 20 डिग्री नीचे तक तापमान के गिर जाने के बावजूद ज़िन्दा रह सकता है । लेकिन यदि गर्मी के दिनों में जब उसमें वास्तव में विकास हो रहा हो और तापमान यदि घटकर जमाव बिंदु से पाँच डिग्री नीचे हो जाए तो पौधा मर जाएगा। देवदार चीड़ के पेड़ जमाव बिंदु से पचास डिग्री नीचे तापमान पर सर्दियों में बचे रह सकते हैं लेकिन यदि गर्मी में तापमान अचानक जमाव बिंदु से पाँच डिग्री नीचे हो जाए तो पेड़ सूख सकता है। दक्षिणी क्षेत्रों में होने वाला पौधा तो तापमान में अचानक उतार-चढ़ाव से और भी ज़्यादा प्रभावित होते हैं। अनेक एशियाई देशों की प्रमुख फ़सल धान में फूल निकलते समय 13 डिग्री सेंटीग्रेड से तापमान का कम होना फ़सल को व्यापक हानि पहुँचाता है ।

'नाभिकीय-शक्ति' का अँधेरा ही अकेला समुद्र और पृथ्वी की सतह पर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को समाप्त कर देगा ।

लम्बे समय तक अँधेरा रहने, रेडियो सक्रिय खराबी और अल्ट्रावायलेट किरण समुद्र में जीव-जन्तुओं पर बहुत घातक प्रभाव डालने और तब वह मनुष्य के भोजन का एक प्रमुख स्रोत नहीं रह जाएगा ।

कृषि के अस्त-व्यस्त हो जाने, फ़सलों के नष्ट होने और अनाज के भंडारों के बर्बाद हो जाने से स्थिति और बिगड़ेगी। ऊर्जा और कच्चा माल उपलब्ध नहीं हो पाने के कारण उद्योग-धंधे नहीं चल पाएँगे । उधर महामारियों से पीड़ित होने के कारण काम करने के लिए श्रमिक भी नहीं होंगे।

मौसमी और जैविक क्षेत्रों में पड़ने वाले प्रभावों का कुल अध्ययन स्पष्ट करता है कि यदि खुलकर नाभिकीय युद्ध हुआ तो मानव जाति ही समाप्त हो जाएगी।

कुछ अमरीकी वैज्ञानिकों द्वारा तैयार किया गया 'नाभिकीय-शीत' के पृथ्वी के पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का विवरण हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं।

पहले कुछ ही महीनों में लगभग सम्पूर्ण पृथ्वी पर चाहे वर्ष का कोई भी महीना हो अत्यन्त ठंडा मौसम होगा जिसमें जीवों, पेड़-पौधों आदि को भारी हानि पहुँचेगी। ऊष्ण-कटिवंधीय और उत्तरी गोलार्ध के मध्यम ऊँचाई के क्षेत्र जहाँ दुनिया की अधिकतर आवादी रहती है इससे विशेष रूप से प्रभावित होंगे। प्रकाश की तीव्रता में गिरावट आने से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में तेज़ी से गिरावट आएगी और पेड़-पौधों का विकास रुक जाएगा। ठंडा मौसम, ताज़े पानी का अभाव अँधेरे के कारण वड़ी संख्या में जानवर मरेंगे। जमाव विंदु के नीचे तापमान, वह भी उत्तरी गोलार्ध के मध्यम ऊँचाई वाले महाद्वीपीय क्षेत्र में, के कारण ताज़े पानी की छिछली नदियाँ जम जाएँगी। फ़ाइटोप्लाकटन का पुनंउत्पादन नहीं होने से वहुत से समुद्री जीवों, ताज़े पानी की मछलियों और जानवरों का खाद्य पदार्थ वर्वाद हो जाएगा। वचे-खुचे ऐसे पदार्थ जिन्हें खाया जा सकता हो, रासायनिक पदार्थों या रेडियो सक्रिय गंदगी से इतने ख़राव हो जाएँगे कि उन्हें खाया नहीं जा सकेगा।

ठंडे मौसम प्रकाश की तीव्रता के कारण पूरी पृथ्वी पर कृषि कार्य ठप्प हो जाएगा। जिन देशों पर नाभिकीय हमले होंगे उनके खाद्यान्नों के गोदाम वर्वाद हो जाएँगे या वे खाने योग्य नहीं रह जाएँगे। खाद्यान्नों का उत्पादन करने वाले देश जरूरतमंद देशों को खाद्यान्नों का निर्यात नहीं कर पाएँगे।

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि नाभिकीय विस्फोटों के परिणामस्वरूप दो से तीन अरव लोग तुरन्त मारे जाएँगे। नाभिकीय शक्ति और 'नाभिकीय-शीत' की शुरुआत, पर्याप्त आवास और ईंधन का अभाव, रेडियो सक्रिय और रासायनिक गंदगी, ताज़े पानी का अभाव, भूख, चिकित्सा सेवा नहीं मिल पाना आदि कारणों से पीड़ितों की संख्या कई गुनी हो जाएगी। सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाएँ, ऊर्जा की आपूर्ति, परिवहन, संचार और अन्य प्रणालियाँ काम करना वन्द कर देंगी। विशेष क़िस्म के जानवरों, ख़ास करके ऊष्ण-कटिवंधीय क्षेत्रों में, की जातियों का समाप्त होना निश्चित प्रायः है। नियोजित खेती की फिर से शुरुआत असंभव सी लगती है रेडियो सक्रिय गंदगी वनी रहेगी और विभिन्न प्रकार की महामारियाँ फैलेंगी।

किरणीयन केवल मानवों के लिए ही नहीं वल्कि अधिकांश पक्षियों, कीड़े-मकोड़ों, स्तनपायियों के लिए भी अत्यन्त ख़तरनाक है। 'किरणीयन प्रधान' वनों को, विशेष रूप से शकुधारी वनों को गंभीर रूप से हानि पहुँचायेगा, क्योंकि पौधे अपनी जड़ों के ज़रिये रेडियो सक्रिय आइसोटोपों को चूस लेंगे, इसलिए खाद्य के स्रोत भी संदूषित हो जाएँगे।

विराट अग्नि सम्पूर्ण वनों का लगभग 20 प्रतिशत, स्तेपी प्रदेश का 15 प्रतिशत और उत्तरी गोलार्द्ध की कृषि योग्य भूमि के 50 प्रतिशत को जलाकर ख़ाक कर देगी। नाभिकीय विस्फोट और बड़े पैमाने पर आग वायुमंडल में विशाल मात्रा में कार्बनिक एसिड, नाइट्रिक एसिड, एथीलीन, प्रोपीलीन और दूसरी विषाक्त गैसें भेजेंगी। ये गैसें फ़ोटो रासायनिक धुआँ उत्पन्न करेंगी, जो सभी जीवधारकों पर घातक प्रमाण छोड़ेगा। नाइट्रिक और सल्फ़रिक मिश्र की मात्रा में लगभग दस गुना वढ़ोतरी होगी, जो प्रतिवर्ष वायुमण्डल में प्रविष्ट किये जाते हैं, इससे 'एसिड' वर्षा और हिम प्लावन विस्तृत क्षेत्रों पर व्याप्त हो जायेगा और मिट्टी पर औसतन पाँच गुना तक एसिड तत्व वढ़ जायेगा। वर्षा और हिमपात के साथ सतह पर गिर कर सल्फ़रिक और नाइट्रिक एसिड पौधों, स्वच्छ जल के जलागारों और पशु जीवन को हानि पहुँचाएँगे और इमारतों व धातु संरचनाओं में तेज़ी से जंग लगने की प्रक्रिया उत्पन्न करेंगे। इस समय अमरीकी उद्योग प्रतिवर्ष वायुमण्डल में कोई 3 करोड़ टन नाइट्रिक और सल्फ़रिक एसिड प्रेषित करते हैं, जिसने पड़ोस के कनाडा में विस्तृत 'एसिड वर्षा' अवक्षेपण किया, जहाँ पर पिछले कुछ वर्षों में 200 ऐसी झीलें, जो पहले स्फटिक जैसी स्वच्छ थीं, केवल ओन्टारियो प्रांत में ही गंभीर रूप से संदूषित हो गयीं।

इस प्रकार की दस गुना 'एसिड वर्षा' विशाल क्षेत्रों में पर्यावरणीय विनाश का कारण वन सकती है। आग और 'रेडियो सक्रियता' की अंतरक्रिया तथा 'एसिड वर्षा' सव जगह पर विशाल परिमाण में खर-पतवार उत्पन्न कर देंगे।

पक्षियों की मौत वन में पाये जाने वाले जीवनाशियों की तीव्र उत्पत्ति में योगदान करेगी। इस सब बातों से समग्र रूप से कर्मी के वन-क्षेत्रों को दलदली भूमि में वदल जायेगा और खर-पतवार सभी स्तेपी भूमि में तेज़ी से उत्पन्न होने लगेगी, क्योंकि एसिड तत्व जितना अधिक होगा उतना ही अधिक भू-क्षरण और पशुओं का अभाव होगा।

उष्ण-कटिवंधीय और उपोष्ण वर्षा और मानसून वन और घास के मैदान इस जलवायु प्रधान को सहन नहीं कर पाएँगे। भूमिगत वृक्ष जड़ प्रणाली के अभाव के कारण तेज़ जल-प्रवाह और उष्ण-कटिवन्धीय और उपोष्ण मिट्टी का वायु द्वारा क्षरण होगा तथा उसके बाद ये क्षेत्र 'बंजर' हो जाएँगे। घास के मैदान अर्ध-रेगिस्तान में वदल जाएँगे और फिर पूर्ण रूप से रेगिस्तान हो जाएँगे। दलदल और खर-पतवार के खेत वनों और स्तेपियों का स्थान ले लेंगे और इस प्रकार हमारे भू-ग्रह पर पादप जीवन का भूगोल पूरी तरह वदल जायेगा।

सापेक्ष सुरक्षा का भ्रम

यद्यपि कुछ एशियाई देश प्रत्यक्ष रूप से नाभिकीय युद्ध में सलिप्त नहीं भी हो सकते हैं; तथापि 'नाभिकीय शीत' और पारिस्थितिक विनाश, नाभिकीय संघर्ष के अन्य तात्कालिक उपायों का तो उल्लेख ही क्या करना, यथा जान की महान हानि और अभूतपूर्व विध्वंस, राष्ट्रीय सीमाओं को लाँघ जायेगा और सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित करेगा।

व्यापक नाभिकीय युद्ध उन सभी स्वास्थ्य रक्षक सीमाओं को तोड़ देगा, जोकि संचारी रोगों के फैलाव को रोकती हैं। जल-आपूर्ति वैक्टीरिया और विषाणुओं से दूषित हो जायेगी। मक्खियाँ और दूसरे कीड़े-मकोड़े जिन पर किरणीयन का प्रभाव कम पड़ता है, गलती हुई इंसानी और पशुओं की लाशों पर भिनभिनायेंगे तथा संचारी रोगवाही कीड़ों की संख्या करोड़ों में बढ़ जायेगी।

आर्थिक क्षेत्र में, सभी राष्ट्रों के बीच, जिनमें विकासशील देश भी शामिल हैं, आर्थिक सम्वन्ध ठाप हो जायेंगे और नगरों में जीवन विल्कुल असंगठित हो जायेगा और सभ्यता भूख, महामारी और संभवतया दुर्व्यवस्था शिकार हो जायेगीं।

लाखों नगर निवासी खाद्यान्नों की खोज में ग्रामीण क्षेत्रों की ओर भागेंगे और कृषि-उत्पादन के उन क्षेत्रों को अस्त-व्यस्त कर देंगे, जो कि उस समय तक चल रहे होंगे। परिवहन ठप्प पड़ जायेगा क्योंकि ईंधन की कमी हो जायेगी और आर्थिक अधिसंरचना भी निश्चल हो जायेगी। केन्द्रीय और स्थानीय अधिकारीगण के समक्ष असमाधानीय समस्याएँ मुँह-वाये खड़ी होंगी। ग्रामीण क्षेत्रों में फ़ार्म-उत्पादों के सप्लायर अपने खाद्य-भण्डार से जुदा नहीं होना चाहेंगे, क्योंकि भूख, ठण्डा मौसम और अंधकार घिर आयेगा और उन्हें पता होगा कि अव फ़सल शायद कभी उगाई न जा सके। आयातित कच्चा माल इस्तेमाल करने वाले कारखाने और निर्यात के लिए माल तैयार करने वाले कारखाने बंद कर देने पड़ेंगे क्योंकि विश्व जिन्सों के और तैयार माल के वाज़ारों का ही अस्तित्व नहीं रहेगा।

केवल सीमित संख्या में ही किसी-किसी परिवार की झोपड़ियाँ ही शेष रह पायेंगी, जो कहीं दूर-दराज़ के इलाक़ों में जहाँ कि शातद ही कोई पहुँच पाये। अलवत्ता विकासशील देशों की कम-से-कम दो-तिहाई आवादी का भोजन और दूसरी सुविधाएँ प्रदान करने वाली अर्थव्यवस्था की तो कमर ही टूट जायेगी, वह नष्ट हो जायेगी। दूसरे शव्दों में, नाभिकीय युद्ध विकासशील देशों की आवादी के अधिकांश को भूख और बीमारी से ही मौत के घाट उतार देगा।

दूसरी उल्लेखनीय वात यह है कि परमाणु बिजली संयंत्रों और बिजली-स्टेशनों पर नाभिकीय (शस्त्र) प्रहार के विशेष रूप से खतरनाक परिणाम होंगे। 1982 के

आरम्भ तक ही, 23 देशों में 272 नाभिकीय विद्युत रिएक्टर काम कर रहे थे। इस समय 236 नाभिकीय रिएक्टर निर्माणाधीन हैं। 1985 तक नाभिकीय विद्युत संयंत्र 32 देशों में कार्यरत होंगे और 2000 ई० तक इस प्रकार के देशों की संख्या 50 हो जाएगी। पाकिस्तान, भारत, दक्षिण कोरिया और दूसरे एशियाई देश अपने नाभिकीय विद्युत केन्द्रों का निर्माण करने की योजना बना चुके हैं। इनमें से कुछ देशों ने तो निर्माण का काम आरम्भ भी कर दिया है।

किसी परमाणु विद्युत संयंत्र में विस्फोट सभी रेडियो सक्रिय सामग्री को उड़ा देगा और विशाल अग्निपुंज तेज़ी से वायुमंडल में ऊँचे चढ़ने लगेगा। नाभिकीय विद्युत संयंत्रों में भंडारित रेडियो सक्रिय सामग्री के क्षरण के नियम उनसे बिल्कुल भिन्न होते हैं, जो नाभिकीय विस्फोट द्वारा उत्पन्न रेडिय सक्रिय सामग्री के क्षरण पर लागू होते हैं। नाभिकीय बम के छोड़े जाने के बाद के पहले कुछ दिनों के भीतर किरणीयन से सम्बन्धित स्थिति मुख्य रूप से इन बमों द्वारा उत्पन्न रेडियो सक्रिय सामग्री द्वारा निर्धारित होगी। बाद में रेडियो सक्रिय राख को देर तक टिकने वाला अंश, विराट विस्तृत दूरी तक फैलने के साथ-साथ बड़े-बड़े क्षेत्रों को संदूषित करेगा और वही निर्धारक कारक बन जाएगा।

यह स्मरणीय है कि 1982 के शिशिर में सोवियत सरकार ने प्रस्ताव रखा कि शांतिपूर्ण नाभिकीय संस्थापनों का पूर्व निर्धारित विनाश को, जिसमें पारम्परिक शस्त्रों का भी उपयोग हो सकता है। नाभिकीय शस्त्रों के उपयोग से आक्रमण माना जाय। दूसरे शब्दों में, ऐसा कार्य, जिसे संयुक्त राष्ट्र पहले ही मानवता के विरुद्ध भयंकरतम अपराध की संज्ञा दे चुका है।

रासायनिक और विषाणु संयंत्रों अथवा रासायनिक और विषाणु शस्त्र-भंडारों पर पूर्व निर्धारित आक्रमण के भी ऐसे भयंकर परिणाम हो सकते हैं, जिनकी भविष्य-वाणी करना कठिन है।

इस प्रकार के पूर्व विचारित विनाश को अपवाद नहीं किया जा सकता क्योंकि युद्धों के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं, जबकि पर्यावरण को हानि पहुँ-चाने के प्रयास जान-बूझकर किए गये।

द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान नाज़ी सैनिकों ने बाँधों को उड़ाया, और हॉलैंड के विस्तृत क्षेत्रों को बाढ़ से पाट दिया। कोरिया-युद्ध के दौरान अमरीकी सेना ने देश के उत्तरी भाग में सिंचाई-प्रणालियों पर गोले बरसाये। ब्रिटेन ने 1950 में मलय विद्रोहियों के साथ अपने युद्ध में उनकी फ़सलें जलाने के लिए अग्नि-बाण छोड़े।

विएतनाम युद्ध में अमरीकी सैनिकों ने अग्नि-बाण, पादप-नाशक और विष-वर्षक गैसें फ़सलों को और वनों को नष्ट करने के लिए छोड़ी, जो विएतनामी छापा-मारों और असैनिकों का भोजन और सिर छिपाने की जगह प्रदान करती थीं।

1961 और 1973 के बीच, विएतनाम में कोई 6 लाख हेक्टेयर वन और 4 लाख हेक्टेयर कृषि-भूमि, जिस पर फ़सल खड़ी जलाकर राख कर दी गयी।

पर्यावरण को नाभिकीय युद्ध जो नुक़सान पहुँचाएगा, उसके स्तर का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 'प्रथम विश्व-युद्ध में यूरोपीय भू-क्षेत्र के 2 लाख वर्ग किलोमीटर पर हुआ था, और दूसरे ने 33 लाख वर्ग किलोमीटर धरती को तहस-नहस किया था।' यह मानकर कि नाभिकीय संघर्ष में युद्ध-क्षेत्र में ऐसी ही आनुपातिक वृद्धि होगी तो पृथ्वी के थल सतह का 50 प्रतिशत नाभिकीय विस्फोटों से प्रभावित होगा। यह सापेक्षिक चित्र है, पूर्ण कदापि नहीं कि नाभिकीय युद्ध के विनाशकारी परिणाम क्या होंगे।

पृथ्वी पर कोई भी स्थान युद्ध के मंच के प्रभाव से सुरक्षापूर्वक अलग नहीं रह सकेगा अथवा नाभिकीय विस्फोटों के विनाशकारी परिणामों से अप्रभावित रह सकेगा। यह आशा करना अत्यन्त घातक भ्रम होगा कि कोई भी नाभिकीय युद्ध में 'अछूता बैठा रह सकेगा।'

आसन्न आशंका से मुक्ति एवं निर्मूलन के विश्वसनीय साधन

आज जो प्रश्न अनिवार्य रूप से उठता है, वह यह कि क्या नाभिकीय विनाश को टालने का कोई विश्वसनीय साधन विद्यमान है।

स्पष्ट ही विवेक यही कहता है कि 'नाभिकीय शीत' को टालने के लिए हर-सम्भव प्रयत्न किया जाना चाहिए ताकि नाभिकीय युद्ध की सम्भावना ही न रहे। इस लक्ष्य की अत्यन्त विश्वसनीय प्राप्ति के लिए आवश्यक है नाभिकीय शस्त्रों के सभी प्रक्षेपक साधनों को और नाभिकीय शस्त्र के सभी भंडारों को नष्ट कर दिया जाय और इसी के साथ उनके उत्पादन को बिल्कुल ही रोक दिया जाय। सोवियत संघ का मंशा ठीक यही था, जब उसने 1962 में कठोर अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण के तहत सामान्य एवं पूर्ण निरस्त्रीकरण संधि का प्रस्ताव रखा था। यह हो सकता है कि आज पश्चिम, सोवियत संघ द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के अनुसार इस समस्या के आमूल समाधान की दिशा में तत्काल क़दम उठाने के लिए तैयार नहीं है। लेकिन उच्च प्राथमिकता नाभिकीय शस्त्रों की होड़ के गुणात्मक एवं संख्यात्मक परिसीमन को तथा नाभिकीय शस्त्रों के अप्रसार को दी जानी चाहिए। सोवियत संघ इसी कार्यनीति पर अमल किये जाने का पैरोकार है, जिसकी प्रेरणा विवेक और यह दृढ़

आशा है कि अन्ततः विवेक की ही विजय होगी।

सोवियत संघ ने अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के विचार के लिए उठाए जाने वाले क़दमों की एक पूरी शृंखला पेश की है। इनके लागू किये जाने से न केवल नाभिकीय युद्ध की सम्भावनाओं को कम किया जा सकेगा बल्कि धीरे-धीरे इस ख़तरे को कम करते हुए पूर्ण निशस्त्रीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने की ओर बढ़ा जा सकेगा।

पूर्ण निरस्त्रीकरण के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष की शुरुआत 1922 में उस समय हुई जबकि सोवियत संघ ने जिनेवा सम्मेलन में हथियारों में व्यापक कमी करने के लिए कार्यक्रम पेश किये।

1962 में सोवियत संघ ने उपरोक्त वर्णित सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण संधि का मसौदा पेश किया। इस मसौदे के विस्तृत दस्तावेज़ में पाँच वर्षों के अन्दर तीन स्तरों पर काम करते हुए पूर्ण निशस्त्रीकरण करने का आह्वान किया गया था।

पहले दौर में नाभिकीय हथियारों के सभी प्रकार के वाहकों को नष्ट किया जाना, दूसरे देशों की ज़मीन पर बने सभी सैनिक अड्डों की समाप्ति, सोवियत और अमरीकी सेना की संख्या परम्परागत हथियारों और सैनिक ख़र्चे में उल्लेखनीय कमी किये जाने की बात कही गई थी।

दूसरे दौर में सभी नाभिकीय, रासायनिक और बैक्टीरिया पर आधारित हथियारों के जखीरे को नष्ट करना, भविष्य में उनका उत्पादन नहीं करना। और सोवियत संघ तथा अमरीका की सेनाओं, हथियारों और सैनिक ख़र्च में और कमी किया जाना था।

तीसरे दौर में सभी देशों में सशस्त्र सेनाओं और सैनिक मशीनरी की समाप्ति किया जाना था।

स्पष्ट है कि सोवियत संघ ने 1962 में जो पहल की थी उनमें अनेक ऐसी समस्याओं के समाधान के तरीक़े सुझाए गए थे जो आज भी मानवता के लिए चिंता का विषय बनी हुई हैं। पश्चिम के अड़ंगे डालने वाले रुख़ के कारण ही सातवें दशक में इन कार्यक्रमों को अमल में लाने पर विचार नहीं हो सका।

1946 में जबकि विश्व द्वितीय महायुद्ध की भयंकर पीड़ा और हीरोशिमा और नागासाकी की दुःखद घटना से उबर भी नहीं पाया था कि सोवियत संघ ने संयुक्त राष्ट्र नाभिकीय ऊर्जा आयोग के समक्ष एक समझौते का मसौदा रखा था। इस मसौदे में नाभिकीय हथियारों के इस्तेमाल और उत्पादन पर रोक के अलावा इस समझौते के लागू होने के तीन महीने के अन्दर सभी नाभिकीय हथियारों के समाप्त किये जाने की व्यवस्था की गई थी। नाभिकीय हथियारों के पक्षधरों के विरोध के बावजूद सोवियत संघ लगातार इसका समाधान खोजने के लिए प्रयास कर रहा है।

नाभिकीय हथियारों के परीक्षण पर रोक—नाभिकीय हथियारों की क़िस्मों में लगातार सुधार के प्रयासों को देखते हुए ज़रूरी हो गया है कि इनके परीक्षणों पर रोक लगाई जाए।

1955 में सोवियत संघ ने प्रस्ताव किया था कि सभी नाभिकीय शक्तियों को यह ज़िम्मेदारी लेनी चाहिए कि वे नाभिकीय परीक्षण वन्द कर देंगी। सोवियत संघ, अमरीका और ब्रिटेन के बीच वर्षों की बातचीत के बावजूद किसी समझौते पर नहीं पहुँच पाने की स्थिति को देखते हुए सोवियत संघ ने प्रस्ताव किया कि तब तक एक अंतरिम समझौता किया जाए। इसी प्रस्ताव के तहत 1963 में वायुमंडल, वाह्य-अंतरिक्ष और पानी के अन्दर विस्फोट नहीं करने की सन्धि पर हस्ताक्षर हुए। आज एक सौ से भी अधिक देश इस सन्धि में शामिल हो चुके हैं।

इस सन्धि के बावजूद इस क्षेत्र में सफलता के अधिक आसार नहीं हैं। अमरीका को अभी दो ऐसी सन्धियों को मंज़ूरी देनी है जिन पर वह पहले हस्ताक्षर कर चुका है। ये सन्धियाँ हैं 1974 में हस्ताक्षर की गयी ज़मीन के अन्दर नाभिकीय परीक्षणों को सीमित करने की सन्धि और 1976 में शांतिपूर्ण कार्यों के लिए ज़मीन के अन्दर नाभिकीय विस्फोट करने के बारे में संधि। नाभिकीय हथियारों के सार्वभौमिक निषेध के बारे में सोवियत संघ, अमरीका और ब्रिटेन के बीच 1977 में शुरू हुई बातचीत को परिचय ने 1980 में एकतरफ़ा तौर पर भंग कर दिया।

6 अगस्त 1985, से एकतरफ़ा तौर पर किसी भी प्रकार के नाभिकीय परीक्षण करने पर रोक की घोषणा करके सोवियत संघ ने एक और प्रमुख नयी पहल की है। सी०पी०एस०यू० की केन्द्रीय समिति के महासचिव मिखाइल गोर्बाचेव द्वारा दिए गये बयान में कहा गया है कि हमारी एकतरफ़ा रोक 1 जनवरी, '86 तक लागू रहेगी। वास्तव में यह रोक तब तक लगी रहेगी जब तक कि अमरीका नाभिकीय परीक्षण नहीं करने की रोक जारी रखेगा।

सामरिक शस्त्र परिसीमन सन्धि नाभिकीय युद्ध के ख़तरे को कम करने के संघर्ष के लिए यह एक बहुत महत्वपूर्ण है। 1972 में बातचीत के दौर में सोवियत संघ और अमरीका ने दो मुख्य समझौतों पर हस्ताक्षर किये—ये थे प्रक्षेपास्त्र विरोधी प्रणाली को परिसीमित करने का समझौता और सामरिक आक्रामक हथियारों के कुछ सम्बन्धों के बारे में कुछ क़दमों के बारे में समझौता। (साल्ट-1)

इस प्रक्रिया का बाद में विकास, जिसे समाचारपत्रों ने 'साल्ट' प्रक्रिया कहा है, के रूप में हुआ। उक्त दो समझौतों पर हस्ताक्षर होने के बाद सोवियत संघ और अमरीका ने इसी प्रक्रिया में और आगे विस्तृत समझौतों पर विचार-विमर्श शुरू किया, जिसमें और ज्यादा विस्तृत और क्रांतिकारी क़दमों को शामिल किया जाना था। कई वर्षों की बातचीत के बाद 1978 में सामरिक आक्रामक हथियारों के परिसीमन के बारे में एक और सन्धि साल्ट-2 पर हस्ताक्षर हुए। इस सन्धि द्वारा

दोनों पक्ष नाभिकीय हथियारों को छोड़ने वाली प्रणालियों पर समान मात्रा में रोक लगाने और वर्तमान नाभिकीय हथियारों में कमी करने और उनके सुधार अथवा नवीनीकरण को सीमित करने पर सहमत हो गये थे। अमरीका ने अभी इस सन्धि को मंजूरी नहीं दी है। इससे अधिक और क्या हो सकता है कि उसने यूरोप में पर्शिंग-2 और क्रूज़ प्रक्षेपास्त्र लगाने शुरू कर दिए हैं, जिससे कि यूरोप में मध्यम दूरी के नाभिकीय हथियारों में कमी करने के लिए जिनेवा में 1981 और 1983 में हुई वार्ताएँ तथा सामरिक हथियारों में कमी और कटौती की 1982 और 83 में हुई वार्ताएँ पूरी नहीं हो सकीं।

इसी कारण से जब सोवियत संघ ने नाभिकीय और अंतरिक्ष में तैनात किये जाने वाले हथियारों को सम्पूर्ण पहलुओं पर अमरीका के साथ बातचीत करने को पहल की तो विश्व जनगण ने उसका स्वागत किया। इसी पहल ने अमरीकी प्रशासन के साथ एक बिल्कुल नये क्षेत्र में समझौता-वार्ता करने और किसी संभावित समझौते पर पहुँचने का रास्ता बनायेगा। इन बातचीत में अंतरिक्ष का सैन्यकरण नहीं होने देना और नाभिकीय तथा मध्यम दूरी के नाभिकीय हथियारों की कमी के सभी पहलुओं पर विचार करके इन जटिल प्रश्नों का समाधान ढूँढ़ा जा सकेगा।

पहले दौर की बातचीत का परिणाम क्या हुआ ? इसे संतोषजनक कह पाना मुश्किल है। सोवियत पक्ष ने समस्याओं के व्यावहारिक हल ढूँढने के लिए अपनी तैयारी को और भी स्पष्ट करने के लिए बातचीत के सभी पहलुओं से संबद्ध विशिष्ट प्रस्ताव रखे। दूसरी ओर अमरीकी स्थिति किसी भी प्रकार से रचनात्मक नहीं थी, बल्कि वह समझौते की भावना के विपरीत थी।

नाभिकीय शस्त्रों का अप्रसार अन्तर्राष्ट्रीय जीवन का एक प्रमुख अंग है। नाभिकीय हथियारों के अप्रसार की वर्तमान व्यवस्थाएँ सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों के वर्षों के प्रयासों का परिणाम हैं। ये व्यवस्थाएँ नाभिकीय शस्त्र अप्रसार संधि पर आधारित हैं। इस संधि पर 1968 में हस्ताक्षर हुए और यह 1970 में लागू हुई। इस समय 120 में भी अधिक देश इसके सदस्य हैं।

इस संधि की व्यवस्थाओं के अनुरूप नाभिकीय शक्ति वाले देशों ने नाभिकीय हथियारों या अन्य नाभिकीय यंत्र किसी को भी नहीं या ग़ैर नाभिकीय शक्ति वाले देशों को देने या स्थानान्तरित करने का वायदा किया है। इस संधि से सहमति व्यक्त करने वाले देशों ने नाभिकीय हथियारों या अन्य यंत्रों को न तो प्राप्त करने और न ही उनका निर्माण करने की भी ज़िम्मेदारी ली है। अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु अर्जा एजेंसी ने ग़ैर नाभिकीय देशों की नाभिकीय गति-विधियों और गोदामों में रखे अन्य नाभिकीय पदार्थों का नियंत्रण सँभाल लिया है।

आज नाभिकीय अप्रसार व्यवस्थाओं को और मजबूत बनाया जाना विशेष

रूप से ज़रूरी हो गया है। ऐसा आठवें दशक में पूरी दुनिया में परमाणु शक्ति प्रौद्योगिकी में तेज़ी से विकास के कारण तथा लगभग नाभिकीय शक्ति बनने के निकट पहुँच जाने वाले देशों की संख्या तेज़ी से बढ़ने के कारण भी हुआ। ऐसे देशों ने वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अपने विकास के आधार पर अपने नाभिकीय हथियार बना लेने की क्षमता विकसित कर ली। इसरायल, दक्षिण अफ्रीका और पाकिस्तान आदि देशों की नाभिकीय आकाँक्षाओं को लेकर पूरी दुनिया में विशेष चिंता हो रही है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के अधिवेशनों में बार-बार इनकी निंदा की गई है। अमरीकी प्रशासन द्वारा ऐसे देशों को दी जा रही सहायता और समर्थन अन्य देशों को ज़रूर चिंतित कर रहा है।

नाभिकीयं हथियारों के परीक्षण पर पूर्णतः रोक, नाभिकीय हथियारों से लैस देशों द्वारा संख्यात्मक और गुणात्मक दोनों ही क्षेत्रों में नाभिकीय हथियारों पर रोक लगाना और नाभिकीय हथियारों के जखीरों को कम करने के बारे में समझौते करके नाभिकीय अप्रसार व्यवस्थाओं को निश्चय ही मज़बूत बनाने में सफल हुआ जा सकता है।

यदि और देश नाभिकीय अप्रसार संधि के सदस्य बन जाएँ तो इसे मज़बूत बनाया जा सकता है। दो नाभिकीय देश चीन और फ्रांस तथा इस नाभिकीय देश बनने के क़रीब की क्षमता वाले देशों द्वारा अभी इस संधि को स्वीकार किया जाना है।

नाभिकीय अप्रसार व्यवस्थाओं को मज़बूत किये जाने के लिए नाभिकीय और ग़ैर-नाभिकीय दोनों ही प्रकार के देशों के लोगों के मिलजुल कर ज़ोरदार प्रयास करना ज़रूरी है। हम इस तथ्य को नज़रंदाज़ नहीं कर सकते कि अभी दुनिया में कुछ ऐसे क्षेत्र है जो अपने पड़ोसियों को धमकाने के लिए नाभिकीय हथियारों को प्राप्त करने की कोशिश कर रहे हैं। परमाणु ऊर्जा सम्पूर्ण मानवता के उपयोग के लिए है। इसका इस्तेमाल सामाजिक प्रगति को बढ़ाने लोगों और देशों के शांतिपूर्ण विकास और समस्याओं के रचनात्मक समाधान ढूँढ़ने के लिए किया जाना चाहिए।

अ-नाभिकीय देशों की सुरक्षा गारंटी को मज़बूत बनाना—नाभिकीय अप्रसार व्यवस्था को मज़बूत बनाना आम तौर पर इस बात पर निर्भर करता है कि जो देश स्वेच्छा से नाभिकीय हथियारों को प्राप्त या विकास करना त्याग देते हैं तो इन्हें इस बात की पर्याप्त गारंटी मिलनी चाहिए कि नाभिकीय हथियारों का उसके खिलाफ़ इस्तेमाल नहीं होगा। ऐसी अनेक अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्थायें हैं, जिनके तहत नाभिकीय अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने वाले ग़ैर-नाभिकीय देशों की सुरक्षा की गारंटी की व्यवस्था है।

1968 में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के तीन स्थायी सदस्यों सोवियत संघ,

अमरीका और ब्रिटेन ने सुरक्षा परिषद में इस प्रकार के विशेष बयान दिये जिसमें परिषद से नाभिकीय अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने वाले किसी भी ग़ैर नाभि-कीय देश पर हमले या नाभिकीय हथियारों को इस्तेमाल के धमकी का सामना कर रहे देश के पक्ष में तुरन्त कार्रवाई करने के विचार को दुहराया गया था। महत्वपूर्ण बात यह नहीं कि सुरक्षा परिषद के इन तीन स्थायी सदस्यों के इस क़दम के वावजद ग़ैर-नाभिकीय देशों के संदेह दूर नहीं हुए और वे अपने उन प्रस्तावों पर अड़े रहे कि नाभिकीय देश इस बात की ज़िम्मेदारी लें कि वे उसके खिलाफ़ नाभिकीय हथियारों का इस्तेमाल नहीं करेंगें।

संयुक्त राष्ट्र महासभा के 1978 में हुए पहले निरस्त्रीकरण सम्मेलन में सोवियत संघ ने ग़ैर-नाभिकीय देशों की इच्छाओं के अनुरूप घोषणा की कि वह कभी भी ऐसे ग़ैर नाभिकीय देशों के खिलाफ़ कभी भी नाभिकीय हथियारों का इस्तेमाल नहीं करेगा जो नाभिकीय हथियारों के निर्माण या प्राप्त करने छोड़ देंगे और जो अपनी सीमाओं में इस प्रकार के हथियारों को नहीं तैनात होने देंगे। उसी वर्ष हुए महासभा के33वें अधिवेशन में सोवियत ने एक ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय समझौता किये जाने का प्रस्ताव किया, जिसमें नाभिकीय हथियार नहीं रखने वाले देशों की सुरक्षा की गारंटी को और मज़वूत बनाने की बात कहीं गई थी। संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिकतर सदस्यों ने इस प्रस्ताव का ज़ोरदार समर्थन किया। इस बारे में सोवियत संघ द्वारा तैयार और पेश किया गया। एक प्रस्ताव का मसविदा निश-स्त्रीकरण समिति (अब निरस्त्रीकरण सम्मेलन), को भेजा गया जिसे एक अन्तर्रा-ष्ट्रीय समझौते का मसविदा तैयार करने को कहा गया। यह प्रश्न अभी तक उलझा हुआ है, क्योंकि पश्चिमी शक्तियों ने मुक्तः नकारात्मक रुख अपना रखा है।

नाभिकीय मुक्त क्षेत्रों और शांति के क्षेत्रों का गठन नाभिकीय खतरे के विरुद्ध संघर्ष का एक और बड़ा क्षेत्र है।—सोवियत संघ और उसके साथी देशों ने छठे दशक से ही नाभिकीय मुक्त क्षेत्रों के गठन का विचार रखना शुरू कर दिया था। इसके बाद सोवियत संघ ने कुछ विशेष क्षेत्रों मध्ययूरोप, उत्तरी यूरोप और अन्य अनेक क्षेत्रों में नाभिकीय मुक्त क्षेत्रों को बनाने के प्रस्तावों का समर्थन किया। इस मामले पर पश्चिमी शक्तियों खास करके अमरीका ने बड़ा ही नकारात्मक रुख अपना रखा है।

सोवियत संघ द्वारा नाभिकीय मुक्त क्षेत्रों के गठन के रुख को एक बार फिर दोहराया जब उसने संयुक्त राष्ट्र संघ में इस आशय का प्रस्ताव रखा कि उन देशों में जिनमें कि नाभिकीय हथियार नहीं हैं, वहाँ नाभिकीय हथियारों को तैनात नहीं किया जाय। उल्लेखनीय है कि इस प्रस्ताव को संयुक्त राष्ट्र के अनेक देशों ने समर्थन किया लेकिन अमरीका और नाटो देशों द्वारा इसका विरोध इसके क्रिया-न्वयन के कार्य में एकमात्र रुकावट है।

सोवियत संघ अभी भी हिंद महासागर को शांति-क्षेत्र में वदलने के पक्ष में है। यह विचार वहुत से तटवर्ती देशों की आकाँक्षाओं का प्रतीक है जो इस क्षेत्र से विदेशी सैनिक अड्डे हटाने और अपनी आज़ादी और सम्प्रभुता को और मज़बूत करना चाहते हैं। अमरीकी विरोध के वावजूद पूरी दुनिया में इसका समर्थन बढ़ रहा है।

1977 से 1978 तक सोवियत संघ ने अमरीका के साथ हिंद महासागर क्षेत्र में सैनिक गतिविधियों को सीमित करने और आगे चलकर इनमें कटौती करने के बारे में बातचीत की। चूँकि यह बातचीत स्पष्टतः इस क्षेत्र में अमरीकी सैनिक योजनाओं के विपरीत थी अतः अमरीका ने खुद ही इस बातचीत को तोड़ दिया।

उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने हिंद महासागर को शांति-क्षेत्र घोषित करने के लिए एक समझौते के दस्तावेज़ को तैयार करने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाने का फ़ैसला किया है।

हम सोवियत संघ द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा और निरस्त्रीकरण की समस्या के समाधान के लिए की गई शांति पहल के अनेक उदाहरण दे सकते हैं। केवल संयुक्त राष्ट्र संघ में ही सोवियत संघ एक सौ के क़रीब संरचनात्मक प्रस्ताव रख चुका है। इन सोवियत प्रयासों का उद्देश्य नौसैनिक गतिविधियों में कमी, रसायनिक हथियारों का निषेध व्यापक विध्वंस करने वाले नये हथियारों का निर्माण रोककर और सैनिक बजट पर खर्च को कम करके उन संसाधनों को विकासशील देशों को देने के लिए बचाया जाना चाहिए। ये सभी प्रयास एशियाई देशों के भविष्य से सीधे जुड़े हुए हैं।

सी०पी०एस०यू की 26वीं बैठक में रखे गये प्रस्ताव, जिनमें सुदूर-पूर्व के सभी सम्बद्ध देशों के बीच विश्वास जागृत करने वाले कार्यों के लिए खुलकर बातचीत करने का उल्लेख है, आज भी समयोचित हैं। सोवियत संघ सभी ऐसे देशों से द्विपक्षीय या बहुपक्षीय ऐसी कोई भी बातचीत करने को तैयार है जिन्हें राजनीतिक और सैनिक क्षेत्रों में विश्वास का वातावरण तैयार करने के लिए विशेष कार्यक्रमों को लागू करने में रुचि है।

मास्को की इच्छा है कि एशिया अफ्रीका और लातीनी अमरीका में तनाव के बिंदु समाप्त हों और खतरनाक स्थितियों का शांतिपूर्ण समाधान खोजा जा सके। यही इच्छा सी०पी०एस०यू की केंद्रीय समिति के महासचिव मिखाइल गोर्वाचिव द्वारा पेश किये गये प्रस्तावों में रखी गयी है। इन प्रस्तावों में सुझाव दिया गया है कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य हस्तक्षेप नहीं करने की नीति का कड़ाई से पालन करें। इन महाद्वीपों के अन्य देशों के साथ बल प्रयोग या बल प्रयोग

की धमकी न दें और वे इन देशों को विभिन्न सैनिक गुटों में न खींचने की ज़िम्मे-

दारी लें। सोवियत संघ इस तरह की ज़िम्मेदारी लेने को तैयार है।

सोवियत संघ एशिया में राजनीतिक स्थिति को सुधारने के बारे में अपने रुख में कितना गंभीर है इसका अनुमान सोवियत-जापानी संबंधों के बारे में उसके रुख से आसानी से लग सकता है। सोवियत संघ यह मानता है कि कुछ मुद्दों पर दो देशों के बीच मतभेद हो सकते हैं लेकिन उससे क्षेत्र विशेष या पूरी दुनिया में शांति और सुरक्षा अनिश्चित करने के लिए साझा प्रयास करने की संभावनाओं से इन्कार नहीं किया जा सकता। सोवियत संघ ने सोवियत-जापानी वातचीत शुरू करने, और अच्छे पड़ोसी और परस्पर विश्वास के आधार जापान के साथ अपने संबंधों को सुधारने के लिए अनेक प्रयास किये हैं जिनकी सबको जानकारी है। जापान की ओर से सोवियत संघ द्वारा किये गये प्रस्तावों के बारे में अभी भी जवाब दिया जाना बाकी है। इन प्रस्तावों में सोवियत संघ ने जापान के साथ एक ऐसा समझौता करने के बारे में वातचीत करने का प्रस्ताव किया था जिसके तहत सोवियत संघ जापान के विरुद्ध नाभिकीय हथियारों का उपयोग नहीं करने का वायदा करता और जापान खुद ग़ैर-नाभिकीय हथियारों वाला देश बने रहने और अपने तीन ग़ैर-नाभिकीय सिद्धांतों पर अडिग रहने के अपने वचनों से बँधे रहने का वायदा करता। इस बात से कोई इंकार नहीं करेगा कि सोवियत संघ का यह प्रस्ताव अभी भी हमेशा की तरह समयोचित बना हुआ है।

सोवियत संघ ने आम तौर पर अन्य देशों द्वारा एशिया में अंतर्राष्ट्रीय माहौल को सुधारने के लिए की गयी रचनात्मक पहल का स्वागत किया है। इनमें कोरियाई गणराज्य द्वारा कोरियाई क्षेत्र और सुदूर-पूर्व में तनाव को कम करने के लिए की गयी शांतिपूर्ण पहल और मंगोलिया गणतंत्र द्वारा किये गये शांति प्रस्ताव शामिल हैं, जिनके पक्ष में विश्व जनमत ने भी अपनी राय दी है। इन प्रस्तावों में अनाक्रमण और एशिया और प्रशांत क्षेत्र के देशों के संबंधों में परस्पर शक्ति का प्रयोग नहीं करना और किसी भी देश को शांतिपूर्ण तरीक़े से जीने का अधिकार देने की घोषणा किया जाना शामिल है। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मंगोलिया की पहल पर 39वें अधिवेशन में इस अधिकार के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी है। इस अधिकार के तहत शांति स्थापित करना और उसे बनाये रखना राज्य की एक मूल जिम्मेदारी घोषित की गयी है। कुछ और महत्वपूर्ण प्रयास विएतनाम, लाओस और कम्पूचिया द्वारा किये गये हैं। इन प्रस्तावों में दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों को परस्पर समझदारी और आपसी संबंध सुधार कर दक्षिण-पूर्व एशिया को एक शांति और स्थिरता का क्षेत्र बनाने का आह्वान किया गया है। गुटनिरपेक्ष देशों ने अनेक उपयोगी और रचनात्मक विचार रखे हैं।

संक्षेप में, एशिया के बारे में बातचीत के लिए अनेक प्रस्ताव हैं। एक अन्य प्रश्न मिखाइल गोर्बाचेव ने मई 1986 में राजीव गांधी के साथ अपनी बातचीत

में उठाया था। यह प्रश्न था कि क्या यह ज़रूरी नहीं है कि इन सभी प्रयासों को एकत्रित करके, कुछ हद तक यूरोपीय अनुभवों को शामिल करते हुए एशिया में सुरक्षा की समस्या के लिए आम व्यापक दृष्टिकोण खोज निकालने और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए एशियाई देशों द्वारा किये गये प्रयासों को एक में जोड़ने की संभावनाओं पर विचार हो ? यह सही है कि ऐसा करना वहुत आसान नहीं होगा लेकिन हेलसिंकी में हुए यूरोपीय सम्मेलन को बुलाना भी तो आसान नहीं था। कई तरीक़ों से ऐसा किया जा सकता है—मसलन द्विपक्षीय या वहुपक्षीय विचार-विमर्श द्वारा जिसमें सम्पूर्ण एशिया के लिए कोई फ़ोरम गठित करना भी शामिल है, जिसमें संयुक्त रूप से रचनात्मक समाधान खोजे जा सकें।

यह पूरी तरह स्पष्ट है कि आज एशिया के देशों द्वारा एकता और मज़बूती के लिए काम करना पहले की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। एक समान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मिलकर काम करके वे अपने महाद्वीप को नाभिकीय ख़तरे से वचा सकते हैं और शांति तथा प्रगति उपलब्ध कर सकते हैं।